चन्दामामा
नवम्बर १९७४
1 Re

Photo by: A. V. RAMAMOORTHY

A SHRINE

मैं गंदे पैरों से भला प्लूटो को अन्दर कैसे लाता ?
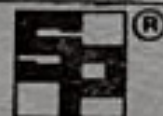
चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
इस महीने की बेताल कथा "पिता का पुत्र" अप्रैल १९७४ के अंक में प्रकाशित बेताल कथा "परिवर्तित मन" के आगे की कथा है। यह उस कथा के तत्वों पर विपुल प्रकाश डालती है।
इस अंक से नये रंगों की सचित्र धारावाही "वीर हनुमान" शुरू हो रही है। विभिन्न पुराणों में वर्णित हनुमान की कहानी को एक कथा सूत्र में गूंथकर चन्दामामा के पाठकों को दे रहे हैं।
वर्ष : २७ नवंबर १९७४ अंक : ५
A CHANDAMAMA PUBLICATION

मित्र-भेद

[१६]

संजीवक ने दमनक को हंस की कहानी सुनाकर समझाया–"विश्वास करनेवाला मूर्ख ऊँट के जैसे चालाक दुष्ट के द्वारा धोखा खा जाता है।" दमनक ने पूछा :–"वह कैसी कहानी है?"

संजीवक ने यों कहा :

धोखा खाये ऊँट की कहानी

पुराने जमाने की बात है। सागरदत्त नामक एक सौदागर था। एक बार वह सौ ऊँटों पर बढ़िया क़िस्म के वस्त्रों की गठरियाँ लदवाकर व्यापार के निमित्त अपने गाँव से चल पड़ा।

उनमें से विकट नामक ऊँट पर ज्यादा बोझ लाद दिया गया था। उस बोझ को वह ऊँट ढो न पाया, उसके पैर लड़खड़ाने लगे और आखिर वह लुढ़क पड़ा। ऊँट चलने की हालत में न था, इसलिए सौदागर ने उस ऊँट पर लादी गठरियों को अन्य ऊँटों पर लदवाया। वह जंगल बड़ा ही भयावना था, इसलिए सौदागर ने वहाँ पर पड़ाव डालना उचित न समझा, इसलिए उस ऊँट को अपनी क़िस्मत पर छोड़ आगे बढ़ा।

सौदागर के चले जाने के बाद विकट नामक वह ऊँट धीरे धीरे हिलने की स्थिति में आया, जंगल में घास चरते, नालों का पानी पीते आहिस्ते-आहिस्ते स्वस्थ हो गया।

उसी जंगल में मदोत्कट नामक एक सिंह था। उसके एक चीता, एक कौआ और एक सियार सेवक थे। वह सिंह अपने सेवकों को साथ ले जंगल में संचार

किया करता था। एक दिन उसने ऊँट को देखा और अपने सेवकों से कहा– "यह विकृत आकृतिवाला विचित्र जानवर कौन है? क्या वह जंगलों में निवास करने वाला जानवर है? या गाँवों में? तुरंत तुम लोग पता लगाओ।"

ऊँटों के बारे में पहले ही जानकारी रखनेवाला कौआ सिंह से बोला–"साहब! यह तो पालतू जानवर है! यह ऊँट कहलाता है, इसका मांस बड़ा ही स्वादिष्ट होता है।"

इस पर सिंह ने उत्तर दिया–"मुझ पर विश्वास करके जो प्राणी मेरे घर आता है, उसका वध मैं नहीं कर सकता। कहा जाता है कि घर आये मेहमान का वध करे तो ब्रह्महत्या के बराबर का पाप लगता है। इसलिए तुम लोग उस ऊँट को अभय प्रदान करके उसको मेरे पास लिवा लाओ! मैं पता लगाऊँगा कि वह किस काम से इस जंगल में आया है।"

सिंह के सेवक ऊँट को अभय प्रदान करके उसको ले आये। ऊँट ने सिंह के सामने साष्टांग प्रणाम किया, इस पर सिंह ने ऊँट से पूछा–"तुम इस जंगल में कैसे आये? क्यों आये?"

ऊँट ने सिंह को अपनी सारी कहानी सुनाई। तब सिंह ने ऊँट को समझाया–

"तुम अपने गाँव मत जाओ। बोझ मत ढोओ। मेरे साथ जंगल में ही रहकर हरी घास चरते रहो।"

ऊँट ने मान लिया। वह जंगल में निश्चित रहते सिंह का चौथा सेवक बना।

थोड़े दिन और गुज़र गये। एक बार सिंह एक हाथी से लड़ पड़ा। हाथी ने अपने दांत का प्रहार करके सिंह को घायल बनाया। इस कारण सिंह अपनी गुफ़ा से हिलने की स्थिति में न था।

इस प्रकार पांच दिन बीत गये। सिंह तथा उसके तीन परिचारक भूख से तड़पने लगे। क्योंकि सिंह गुफ़ा से बाहर जाकर शिकार खेल नहीं सकता था। मगर

घास चरकर जीनेवाला ऊँट खूब मोटा-तगड़ा बन गया था।

अपने सेवकों की बुरी हालत देख सिंह ने कहा—"मैं घायल होकर बीमार हूँ। इसलिए पहले की भांति शिकार खेलकर तुम्हें आहार दे न सकूँगा। तुम लोग स्वयं मेहनत उठाकर किसी जानवर को प्राप्तकर अपना पेट भर लो।"

"जब हमारे राजा की यह हालत है, तब हम अपने उदर पोषण की बात क्या सोच सकते हैं?" सेवकों ने कहा।

"मेरे प्रति तुम लोगों की जो श्रद्धा है, वह प्रशंसनीय है। तुम लोग अभी जाकर मेरे वास्ते किसी जानवर को उपहार स्वरूप पकड़ लाओ। हम सब मिलकर खा लेंगे।" सिंह ने कहा। सब मौन रह गये।

"तुम लोगों को संकोच करने की जरूरत नहीं, जाओ। किसी जानवर की खोज करो। इस हालत में भी आकर मैं उसका वध करके तुम्हें आहार दूंगा।" सिंह ने समझाया। इस पर सिंह के चारों अनुचर किसी जानवर की खोज में निकल पड़े। मगर उन्हें एक भी जानवर कहीं दिखायी नहीं दिया। इस पर कौआ तथा सियार गुप्त मंत्रणा करने लगे।

"दोस्त! हम बिना मतलब के यूँ ही घूमे ही क्यों? ऊँट एकदम मोटा-ताजा बन गया है। इसको मारकर खा ले तो हमारे कई दिन आराम से गुज़र सकते हैं।" सियार ने कौए को सुझाया।

"मित्रवर! बात तो सही है, किंतु हमारे मालिक ने इस ऊँट को अभय प्रदान किया है। ऐसी हालत में हम इसको कैसे मार सकते हैं?" कौए ने कहा।

"तब तो मैं अपने मालिक के पास जाकर ऊँट को मारने की अनुमति प्राप्त कर लेता हूँ।" यों गुप्त रूप से सियार ने कौए से कहा, तब प्रकट रूप में अन्य जानवरों से बोला—"दोस्तो! तुम लोग यहीं पर रहो, मैं अभी हमारे मालिक के पास जाकर आगे के कार्यक्रम का पता लगाकर लौटता हूँ।"

विचित्र जुड़वाँ
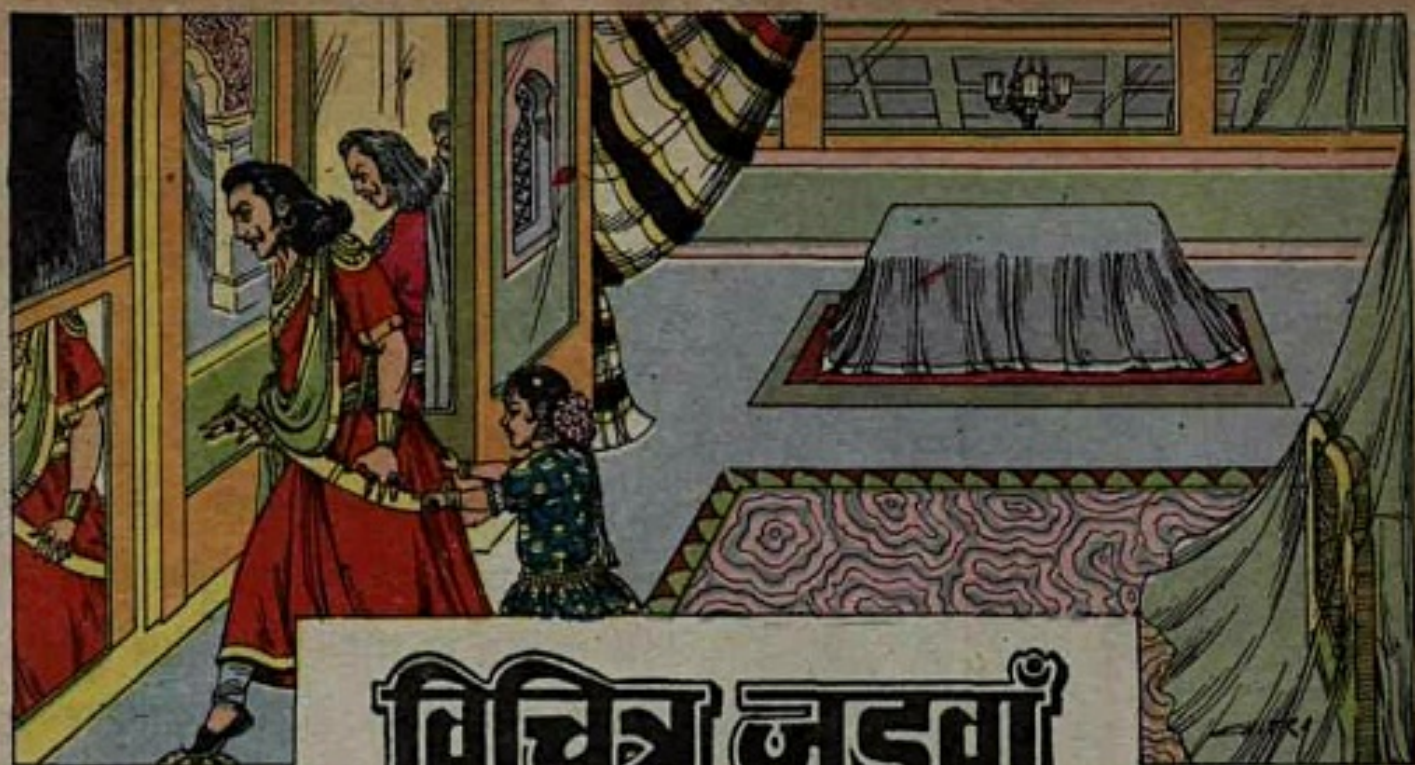
[४]

[राजा ने यह बताकर सबको विश्वास दिलाया कि उसकी तीनों पुत्रियों को गीध उठा ले गये हैं। एक दिन रात के वक़्त राजा के शयन गृह में उसकी बड़ी पुत्री सुहासिनी आयी। राजा ने उस लड़की को दासी के हाथ सौंप दिया, तब सुरंग की ओर बढ़ा, लौटा तो देखता क्या है कि सुहासिनी और दासी भी गायब हैं। बाद–]

सुरंग मार्ग में और कहीं कोई गुप्त द्वार हो, इसकी खोज करते राजा थोड़ी दूर और आगे चला, तो उसे अचानक एक जगह एक द्वार दिखाई दिया। उसके आगे दासी और सुहासिनी को देख राजा की जान में जान आई। वह उस द्वार से होकर भीतर पहुँचा, तो देखता क्या है, वह सुहासिनी के सोने का कमरा था।

इस विचित्र सुरंग के रहस्य का पता लगाने के ख्याल से राजा ने जांच करके देखा। सुहासिनी के कमरे की दीवारों के चारों तरफ़ तथा ऊपर से नीचे तक आदम क़द के सुंदर आइने लगे हुए हैं। उनमें से एक आइना बड़ा ही विचित्र है। फ़र्श पर एक जगह एक विचित्र ढंग की कल थी। उसे दबाने पर वह आईना ज़मीन में उतर गया और वहाँ पर एक द्वार

खुल गया। वही द्वार सुरंग के भीतर का रास्ता खोल देता है। उस द्वार को पार करने पर सुरंग के प्रारंभ में भी एक कल और है। उसे दवाने पर आईना यथा स्थान पर आकर द्वार बंद हो जाता है। फिर से कल को दवाने पर आईना ज़मीन के भीतर जाकर द्वार दिखाई देता है। यह रहस्य तो राजा ने जान लिया।

अब प्रश्न यह था कि सुहासिनी राजा के कमरे में कैसे पहुँच गई? साधारणतः दासी सुहासिनी को अपनी बगल में लिटा कर सो जाती है। उस दिन आधी रात के वक़्त सुहासिनी जाग पड़ी। उसे कुछ सूझ नहीं रहा था। इसलिए वह कमरे में समय काटने के लिए यूं ही टहल रही थी। अचानक सुहासिनी का पैर वहाँ ज़मीन पर स्थित कल पर पड़ गया। तुरंत आईने का ज़मीन में उतर जाना तथा वहाँ द्वार का खुल जाना एक साथ हो गया।

इस विचित्र दृश्य को देख सुहासिनी सुरंग में प्रवेश करके चलती गई। उस सुरंग ने सुहासिनी को राजा के शयनकक्ष की तस्वीर के पीछे तक पहुँचा दिया। अंधेरा छाया हुआ था। इस वजह से सुहासिनी को पता न चला कि वहीं तक सुरंग है और उसे पार कर एक क़दम आगे बढ़ाने से वहाँ पर एक तस्वीर है। वह और आगे बढ़ने के ख़्याल से तस्वीर को ढकेल कर झांकने लगी, तब उस दरार में से सुहासिनी को सोने वाला राजा अच्छी तरह से दिखाई दिया। तुरंत अपने पिता के पास जाने की आतुरता से बड़ी तक़लीफ़ उठा कर उसने उस भारी तस्वीर को हटाया, अपने पिता से मिली। इसके बाद राजा भी इस विचित्र सुरंग में फँस कर रास्ते का पता न लगने से बड़ी देर तक घूमता रहा।

इस प्रकार उस विचित्र सुरंग का रहस्य मार्ग जानने के बाद राजा के मन में एक ओर खुशी हुई, तो दूसरी ओर उसे डर भी

सताने लगा। सब की आँख बचाकर डरते-डरते राजा आज तक उद्यान में से भूगर्भ गृह में आता-जाता रहा। अब इस सुरंग का रहस्य खुल जाने से राजा का वह डर भी जाता रहा। अब वह जब चाहे तब गुप्त रूप से उस भूगृह में प्रवेश करके अपने बच्चों को देख सकता है। अपने इस भाग्य पर वह मन ही मन फूला न समाया।

लेकिन राजा को अब एक डर और सताने लगा। यदि उचित बंदोबस्त न किया गया तो आज के जैसे आगे भी सुहासिनी या और बच्चियाँ सुरंग में से अपने कमरे में प्रवेश कर सकती हैं। इससे क्या होगा, उसने आज तक जो सावधानी बरती, वह बेकार साबित होगी। ऐसा न हो, इसके लिए कौन-सा उपाय है, इस बारे में राजा बराबर सोचने लगा।

आखिर राजा को एक उपाय सूझा। वह यह कि इसके पूर्व राजा ने अपनी तीनों पुत्रियों को भूगर्भ के गृह में तीन अलग-अलग कमरों में रखा था और प्रत्येक पुत्री की देख-रेख के लिए एक दासी को नियुक्त किया था, लेकिन आइंदा उस कलवाले कमरे में कोई भी संचार करे, तो उसकी कल्पना के अनुसार खतरा पैदा हो सकता है। इसलिए राजा ने उस कमरे को खाली रखने का निश्चय किया। दासियों को चेतावनी भी दी कि अपनी तीनों पुत्रियों को दो कमरों में ही रखकर उनकी रक्षा करें। दासियों ने हामी भर दी, तब जाकर राजा का मन शांत हो गया।

इसके बाद राजा थोड़ी देर तक अपनी तीनों पुत्रियों के साथ बातचीत करता रहा, तब इसके पूर्व सुहासिनी के रहनेवाले आइनोंवाले कमरे में गया। कल पर पैर रखकर उसे दबाते ही आईना जमीन में धंस गया और द्वार खुल गया। उस द्वार से होकर सुरंग में पहुँचा। पुनः वहाँ की कल को पैर से दबाते ही दर्वाजा बंद हो गया।

इस गुप्त मार्ग का पता बतानेवाले भगवान के प्रति राजा ने प्रणाम किया और बड़ी प्रसन्नतापूर्वक अपने कमरे में आ पहुँचा ।

* * *

उस दिन से राजा भूगर्भ-गृह में अनेक बार बड़े साहस के साथ आता-जाता रहा । क्रमशः दिन बीतते गये । लेकिन जब भी राजा राजकुमारियों को देखने आता, तब वे अपने पिता के पैरों से लिपट कर पूछ बैठतीं–"पिताजी, हम भी तुम्हारे साथ चलेंगी । यहाँ पर हमको अच्छा नहीं लगता । हम माँ को देखना चाहती हैं । हमें भी तुम्हारे साथ क्यों नहीं ले जाते? आखिर हमको यहाँ पर क्यों छोड़ गये हैं?"

राजा में अपनी पुत्रियों को अपने साथ ले जाने की हिम्मत न थी । इसलिए वह अपनी बच्चियों को अकसर समझाया करता था–"अभी नहीं बेटियों, फिर कभी ले जाऊँगा । तुम लोगों को यहाँ पर किस बात की कमी है? थोड़े दिन और रह जाओ!"

क्रमशः महीने बीतते गये । राजा इस बात पर प्रसन्न था कि उसकी तीनों पुत्रियाँ सुरक्षित रूप से पलती जा रही हैं । मगर उधर रानी दिन-ब-दिन चिंता के मारे कमज़ोर होती जा रही थी । क्योंकि बच्चों की खोज में गये हुए नौकरों में से कई लोग निराश लौट आये थे । जब-तब रानी ज्योतिषी को बुलवाकर पूछा करती थी–"क्या मेरी बच्चियाँ कुशल हैं? कब तक मैं उन्हें देख सकती हूँ? फिर से उनकी जन्म-पत्रियाँ देखकर साफ़-साफ़ बतला दीजिए । उन्हें देखे बग़ैर मैं ज़्यादा दिन रह नहीं सकती ।"

"हाँ, महारानीजी; तीनों राजकुमारियाँ सुरक्षित हैं । उनके पीछे गये सौ नौकर तथा दासियाँ भी सुरक्षित हैं । आप चिंता न कीजिए । जन्म-पत्रियों के द्वारा स्पष्ट मालूम होता है कि कुछ ही दिनों में वे सब सुरक्षित लौट आवेंगे ।" ज्योतिषी

बराबर यही जवाब देता रहा। यह उत्तर सुनने पर रानी थोड़ा संतुष्ट हो जाती और कुछ दिन तक वह निश्चित रहा करती थी।

इस प्रकार दो और साल बीत गये। गुप्त सुरंग के द्वारा भूगर्भ-गृह में जाकर राजा रोज लौट रहा है। तीनों राजकुमारियाँ सुरक्षित हैं। मगर जब भी राजा भूगर्भ-गृह में जाता और अपनी बच्चियों से मिलता तब राजकुमारियाँ बराबर राजा को तंग करतीं कि उन्हें बाहर ले जावे।

"पिताजी! हमको आपने यहाँ पर क्यों रखा? हम माताजी को देखना चाहती हैं। माताजी के पास हमको ले जाईए..." यों रोते हुए राजकुमारियाँ अपने पिता के पैरों से लिपट जातीं। उनके रोते देख राजा का दिल पसीज उठता। कभी-कभी उसे लगता—'एक बार इन्हें ले जाकर रानी को दिखला दूँ!' मगर ऐसा करने की उसकी हिम्मत न पड़ती थी। फिर सोचता—'चाहे जो हो, अब एक वर्ष ही रह गया है? इस अवधि में उसको विचलित होना नहीं चाहिए!' इसीलिए राजकुमारियों के रोने-धोने पर भी उन्हें समझाते राजा जैसे-तैसे अपने दुख को दबाते समय काटता आ रहा है।

इस प्रकार कुछ दिन और बीत गये। और चार दिनों में राजकुमारियों के सात साल पूरे होनेवाले हैं। उस दिन वे

खतरों से मुक्त होकर भूगर्भ-गृह से बाहर जा सकते हैं। इस विचार के आते ही राजा ने सोचा–"आज तक, इन तीन वर्षों में राजकुमारियों को किसी भी प्रकार के खतरे के बिना भूगर्भ-गृह में सुरक्षित रख सका। और क्या है। चार दिन तक थोड़ा सावधान रहे तो शेष चार वर्ष भी पूरे हो जायेंगे। जन्म कुंडली के अनुसार राजकुमारियाँ बिना खतरे के बच सकती हैं। इसलिए थोड़े दिन उसे अपने मन को नियंत्रण में रखना चाहिए, वरना सारी मेहनत बेकार हो जाएगी।"

रोज़ की भांति एक दिन राजा सवेरे ही गुप्त मार्ग के द्वारा राजकुमारियों को देखने गया। राजकुमारियों का भूगर्भ-गृह में रहने की अवधि उस दिन समाप्त होनेवाली थी। राजकुमारियों ने अपने पिता को देखते ही उसके पैरों से लिपट कर हठ करते कहा–"आज हमें आप ज़रूर यहाँ से घर ले जाइये। अब हम यहाँ पर नहीं रह सकतीं। आज आपको हमें यहाँ से घर ले जाना ही होगा।"

राजकुमारियों का दुख देख राजा का दिल पिघल गया। उसने अपने मन को ढाढ़स बंधाया–"इन तीन वर्षों में राजकुमारियों के लिए कोई खतरा पैदा नहीं हुआ। अब केवल चौबीस घंटों के भीतर कौन-सा खतरा पैदा होनेवाला है? इसके अलावा इतने सारे लोगों के पहरा देते कौन सी विपत्ति पैदा होगी?" यों सोचकर राजा तीनों राजकुमारियों को सौ नौकर तथा तीन दासियों के साथ भूगर्भ-गृह में से उद्यान में ले आया। बाहर का प्रकाश देखते ही राजकुमारियाँ उछल पड़ीं, वे खुशी के मारे खेलने लगीं। इस दृश्य को देख राजा की आँखें चमक उठीं। तीनों राजकुमारियों को दासियों के हाथ सौंपकर राजा भी उनके पास बैठ गया।

सौ नौकर राजकुमारियों के चारों तरफ़ पहरा दे रहे थे। तीन साल बाद बाहरी दुनिया को देखते ही राजकुमारियाँ उछल-

कूद करते खेलने लगीं। उनके खेल देख राजा का मन प्रसन्नता से भर उठा।

इतने में अचानक भयंकर आंधी उठी। सारा उद्यान धूल से भर उठा। वहाँ पर उपस्थित सभी लोगों की आँखें पल भर के लिए बंद हुईं। पुनः आँखें खोलने के पहले तीन गीध आकर राजकुमारियों को उठा ले जाते उन्हें दिखाई दिया। राजा बेहोश होकर नीचे गिर पड़ा। दासियाँ राजा की परिचर्या करने लगीं। सौ नौकर गीधों का पीछा करते राजकुमारियों को छुड़ाने के लिए भाग खड़े हुए।

राजा ने होश में आने पर पूछा– "नौकर क्या हो गये?" उसी वक़्त नौकर एक के बाद एक उदास चेहरे लिये वापस लौटने लगे। ठीक तीन साल पूर्व राजा ने जो स्वांग रचकर कल्पित बातें बताई थीं, आज उनको अपनी आँखों के सामने सच होते देख वह स्वयं अपनी निंदा करने लगा।

राजा यह सोचकर दुखी होने लगा– "आज इस रूप में घटित होना था, इसीलिए तीन साल पूर्व किसी दुष्ट ग्रह ने मेरे भीतर प्रवेश करके मेरे मुँह से ऐसी अशुभ बातें निकालवायी थीं। इसलिए कहा जाता है–'क़िस्मत में बदी न हो तो कोई ऐसी अशुभ बात मुँह से न निकलती।'"

लेकिन भाग्य में जैसा लिखा था, वैसा ही हुआ। वास्तव में किसी अतीत शक्ति की प्रेरणा के कारण ही राजा का मन विचलित हुआ और राजकुमारियों को उद्यान में ले जाने की इच्छा उसके मन में पैदा हुई। जो खतरा पैदा होना था, वह होकर ही रहा। जब चिड़ियाँ खेत चुग गईं, तब पछताने से क्या होता है?

अब रानी के सामने यह बात छिपाने की कोई ज़रूरत नहीं। यह सोचकर राजा अपने परिवार के साथ महल में पहुँचा। बड़ी व्यथा के साथ उसने रानी को सारी कहानी आदि से अंत तक सुनाई। रानी भी दुख के सागर में डूब गई।

(और है)

पिता का पुत्र

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, तुमने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए असाधारण प्रतिज्ञा की है। मगर अत्यंत प्रयास के साथ प्राप्त करनेवाले लक्ष्यों के द्वारा भी कभी कभी अच्छा परिणाम नहीं निकलता। इसके उदाहरण स्वरूप में तुम्हें अमरध्वज की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो!"

बेताल यों कहानी सुनाने लगा: अमरावती नगर का युवराजा अमरध्वज एक बार शिकार खेलने के निमित्त घने जंगल में गया। वहाँ पर एक भील कन्या को देख उस पर मोहित हुआ। शर्त के अनुसार उस कन्या के साथ विवाह करने

बेताल कथाएँ

क़ैदी जैसे इस जीवन में अमरध्वज ही उसके लिए एक मात्र सहारा था। इसलिए रात-दिन उसको अपने निकट रखने का प्रयत्न करती थी।

अमरध्वज भी इस आशा के साथ अपना अधिक समय भील युवती के साथ बिताया करता था कि क्रमशः उसमें परिवर्तन अवश्य आ जाएगा। उस युवती को लोगों के बीच स्वेच्छापूर्वक चलने तथा उसमें आवश्यक व्यावहारिक ज्ञान पैदा करने के लिए अमरध्वज को स्वयं विशेष प्रयास करना पड़ता था। लेकिन उसके प्रयत्न सफल होते दिखाई न दिये।
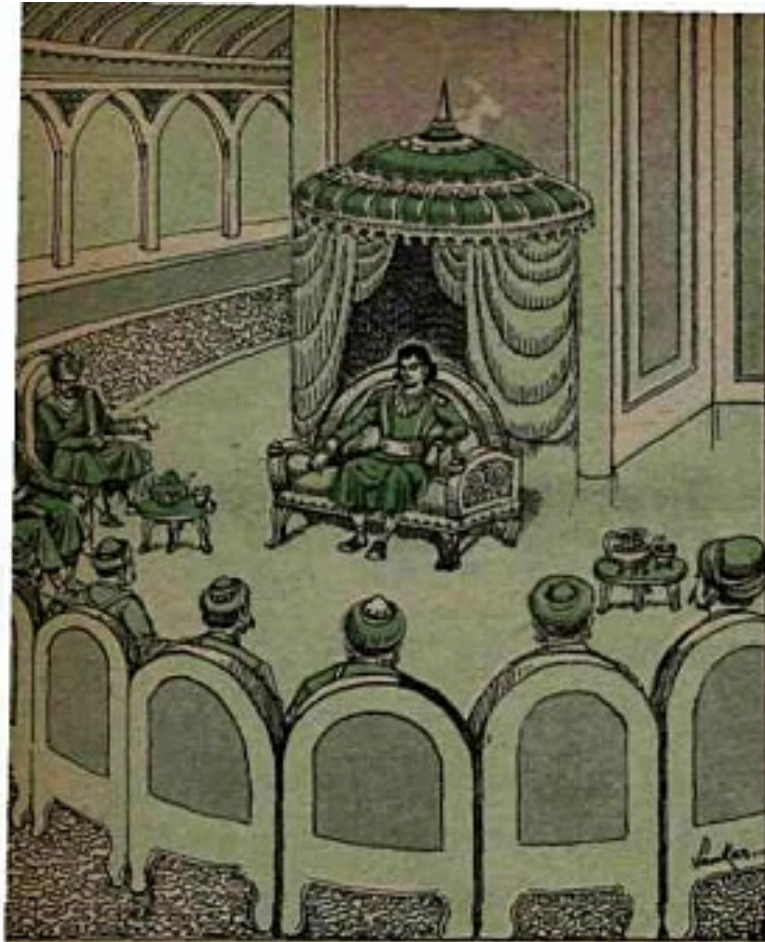
के लिए उसने एक बलवान भील योद्धा को हराया और उस कन्या को अपने नगर में लाकर उसके साथ विवाह किया।

लेकिन भील युवती के अंतःपुर में प्रवेश करने के बाद कई समस्यएँ उत्पन्न हुईं। राजमहल का वातावरण उसके लिए बिलकुल नया था। राजपरिवार संबंधी आचार-व्यवहारों से वह सर्वथा अनभिज्ञ थी। इस नये जीवन में असंख्य लोगों के बीच रहते हुए भी उसने ऐसा अनुभव किया कि वह अकेली रह रही है। वह अपनी परिचारिकाओं के साथ बातचीत करने में भी सकुचाती थी। वह अपने महल से कभी बाहर तक न निकलती थी।

अमरध्वज इस प्रकार अपना अधिकांश समय अपनी पत्नी के साथ व्यतीत करता था, इस कारण वह राज्य-शासन संबंधी कार्यों से अनभिज्ञ रहने लगा; फिर भी मंत्री वे सारे कार्य स्वयं संभालता था।

एक बार अमरध्वज को यह सूचना मिली कि पड़ोसी देश का राजा अमरावती पर हमला करने की तैयारियाँ कर रहा है। यह समाचार मिलते ही अमरध्वज अंतःपुर से बाहर आया, सभी मंत्रियों को बुलवा कर युद्ध संबंधी चर्चाएँ करने लगा।

उस वक़्त भील युवती अमरध्वज की खोज करते वहाँ पर आ पहुँची और उसका हाथ पकड़ कर खींचते हुए बोली–"इतनी

देर तक मुझे अकेली छोड़ तुम यहाँ पर क्या कर रहे हो? चलो, अपने महल में!"

इस घटना को देख मंत्री सब चकित रह गये। कुछ लोगों को हंसी भी आ गई। अमरध्वज ने अपमान का अनुभव किया। तत्काल उस युवती के साथ अंत:पुर में गया और उसको डाँटते बोला— "मैंने आज तक तुमको जो कुछ समझाया, वह सब बेकार साबित हुआ। मुझे राज्य संबंधी अनेक कार्य संभालने पड़ते हैं; मैं न केवल तुम्हारा पति हूँ, बल्कि इस देश का युवराजा भी हूँ। तुमने अपने मंत्रियों के बीच मेरा अपमान किया। थोड़े समय बाद राजाओं के बीच भी मेरी यही हालत होगी। मैं तुमको चुनकर लाया, इसलिए मुझे इस अपमान को भोगना ही पड़ेगा, मगर तुममें परिवर्तन लाना मुझ से संभव नहीं है।"

अमरध्वज की बातें भील युवती की समझ में ठीक से न आईं। परंतु अमरध्वज को क्रुद्ध होते देख वह पागल की तरह उसकी ओर देखती रह गई।

उस दिन से अमरध्वज रात के वक़्त को छोड़ दिन में अंत:पुर से दूर रहने लगा। वास्तव में राज-काज भी अधिक थे। शीघ्र ही युद्ध हुआ। युद्ध में अमरध्वज ने शत्रुओं को बुरी तरह से पराजित किया।

अपने पति के कम दीखते देख भील युवती को अपना जीवन क़ैदखाने जैसा प्रतीत होने लगा। आसपास के वातावरण से वह ऊब गई। उसमें यह परिवर्तन देख अमरध्वज को बड़ा दुख हुआ। नयी ज़िंदगी में खपने के बदले वह इस वातावरण से दूर हटती जा रही है। भीलों के बीच से उस युवती को लाने पर अमरध्वज पछताने लगा। उस युवती के प्रति उसके मन में दया उत्पन्न हुई। उसको फिर से भीलों के बीच भेजना चाहे तो वह उस समय गर्भवती थी।

अमरावती में प्रति वर्ष दशहरे का उत्सव मनाया जाता था। उस अवसर

पर अनेक प्रकार के प्रदर्शन और स्पर्धाएँ हुआ करती थीं। इन सब में अद्‌भुत प्रदर्शन यह था कि अमरध्वज अत्यंत प्राचीन पत्थर के गदे से हाथी के साथ युद्ध करके उसको मार डालता था। उस शिला को अमरध्वज के सिवाय कोई ऊपर उठा नहीं पाता था।

इस बार उत्सवों का अवलोकन करने के निमित्त अमरध्वज अपने साथ अपनी भील पत्नी को भी ले गया। उत्सव को देखने लोग लाखों की तादाद में आये थे। उस भीड़ को देख भील युवती आश्चर्य में आकर बोली–"हमारे यहाँ भी मेला लगता है, लेकिन उस में इतने सारे लोग नहीं आते! यहाँ पर ऐसी कौन-सी खासियत है? ये सब लोग आये कहाँ से?"

"ये सब लोग मेरे बल का प्रदर्शन देखने आये हैं। ऐसा प्रदर्शन तुमने कभी देखा न होगा। अभी थोड़ी ही देर में देखोगी।" अमरध्वज ने कहा।

प्रदर्शन का अवलोकन करने के लिए राजपरिवार तथा अन्य प्रमुख व्यक्तियों के बैठने के लिए ऊँचाई पर प्रबंध किया गया था। अमरध्वज के मैदान में आते ही सबने जयकार किये। उसने पत्थर के गदे को आसानी से ऊपर उठाया। फिर मत्त हाथी को उसके सामने लाया गया। हाथी तथा अमरध्वज के बीच बड़ी देर तक भयंकर युद्ध हुआ।

हाथी भयंकर रूप से घींकार करते अमरध्वज को सूंड से मारने का प्रयत्न करने लगा। मगर शीघ्र ही उसने हाथी को मार डाला।

अमरध्वज पर फूलों की वर्षा की गई। उसने अपनी पत्नी की ओर गर्व भरी दृष्टि से देखा, वह ठठाकर हंस पड़ी। उसने अपनी पत्नी के पास जाकर पूछा–"तुम हंस क्यों पड़ी?"

-"तुमने कौन-सा बड़ा काम किया जिसके लिए ये लोग कोलाहल मचा रहे हैं?" भील युवती ने अमरध्वज से पूछा।

"पत्थर के उस गदे को कोई भी मनुष्य उठा नहीं सकता है। मैंने न केवल उसको उठाया, बल्कि उससे हाथी को भी मार डाला। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं?" अमरध्वज ने उत्साह भरे स्वर में अपनी पत्नी से पूछा।

"क्या तुम समझते हो कि उस पत्थर के गदे को कोई उठा नहीं सकता?" भील युवती ने पूछा।

"जो व्यक्ति उस गदे को उठायेगा, उसको मैं अपना सारा राज्य दूंगा।" अमरध्वज ने कहा।

भील युवती ने आश्चर्य में आकर कहा- "उसको उठा सकनेवाले लोग मेरी बस्ती में कई हैं।"

"अगर हों तो बुला लाओ। अभी तुम अपनी बस्ती में चली जाओ। पत्थर के गदे को उठा सकनेवाले को अपने साथ बुला लाओ। अगर तुम उसको बुला न लाओगी तो तुम्हें भी मेरे महल में आने की जरूरत नहीं।" अमरध्वज ने अपनी भील पत्नी से कहा।

इसके बाद अमरध्वज ने उसी वक़्त अपनी पत्नी को भील बस्ती में भेजा। वह फिर लौटकर नहीं आई।

पंद्रह साल बीत गये। हर साल दशहरे के उत्सव और मेले लग ही रहे हैं। हर साल अमरध्वज पत्थर के गदे से हाथी का वध करता ही जा रहा है।

सोलहवाँ वर्ष जब अमरध्वज ने पत्थर के गदे से हाथी का वध किया, तब भीड़ में से एक भील युवक आगे आया और बोला-"महाराज, क्या आप मुझे इस बात की अनुमति देंगे कि मैं जांच लूं, इस पत्थर के गदे को मैं भी उठा सकता हूँ या नहीं?"

अमरध्वज ने उस युवक की ओर पल भर विस्मय एवं प्रश्नार्थक दृष्टि से देखा, फिर कहा-"कोशिश करके देखो तो, यदि तुम उठा सके तो मैं अपना राज्य ही तुमको दे दूंगा।"

दूसरे ही क्षण भील युवक ने पत्थर के उस गदे को ऊपर उठाया, उसे खूब घुमाकर ऊपर उछाल दिया। उस युवक की शक्ति पर अमरध्वज चकित रह गया।

उस वक़्त भील युवती ने आगे बढ़कर अमरध्वज से कहा–"देखा आपने? आपसे बढ़कर बलवान हमारी भील बस्ती में हैं!" अमरध्वज ने पहचान लिया कि वह नारी उसकी पत्नी ही है! जब उसे यह मालूम हुआ कि वह युवक भी उसी का पुत्र है, तब वह बड़ा प्रसन्न हुआ। पर उसने इस बात के लिए अपनी पत्नी से क्षमा मांगी कि उसने उसका अपमान किया था।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन! भील युवती ने कहा था कि उस पत्थर के गदे को उठा सकनेवाले कई लोग उसकी भील बस्ती में हैं। लेकिन पंद्रह वर्ष तक वह किसी को अपने साथ क्यों न लाई? तब यह बात साबित हो गई कि वह झूठ बोल चुकी है, फिर भी अमरध्वज ने उससे क्षमा क्यों माँगी? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"जंगली लोग झूठ नहीं बोलते! दूसरों के बल एवं पराक्रम की वे सदा तारीफ़ करते हैं। भील युवती झूठ नहीं बोली। अपने पति से भी बढ़कर बलवान भील बस्ती में हैं, इसीलिए उसने यह बात कही थी। मगर उसको यह कतई पसंद न था कि उन्हें लाकर अपने पति को राज्य से वंचित करे। इसीलिए वह अपने पुत्र के बड़े होने तक प्रतीक्षा करती रही, तब उसने साबित किया कि उसके पति से भी बढ़कर बलवान भील बस्ती में हैं। उसने अपने राज्य को अपने पुत्र को ही प्राप्त होने का उपाय किया, अतः इसी कृतज्ञता के कारण अमरध्वज ने भील पत्नी से क्षमा मांगी।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

पेशे का देवता

सैकड़ों साल पहले की बात है। चीन के एक गाँव में चांग ला नामक टोपियों का एक व्यापारी था। टोपियाँ बनाने का पेशा उसे पैतृक पेशे के रूप में प्राप्त था। चांग ला के पिता ने इसी पेशे के द्वारा भारी संपत्ति कमाई और मरते समय चांग ला को बताया कि वह कभी इस पेशे को न छोड़े।

मगर पिता के मरने के बाद इतनी सारी संपत्ति के रखते चांग ला को टोपियों का पेशा पसंद न था। फिर भी अचानक उस पेशे को बंद कर दे तो शायद "पेशे का देवता" नाराज़ हो जाय, इस डर से उसने इस पेशे को चालू तो रखा, लेकिन लापरवाही से वह टोपियाँ सीता और अधिक दाम की मांग करता। इससे गाँववाले चांग ला से नाराज़ हो गये और पड़ोसी गाँव से वांग ला को बुला लाये।

वांग ला गुच्छेदार टोपियाँ सीने में चतुर था। वह टोपियों के साथ तरह-तरह की थैलियाँ भी सिया करता था। उसने चांग ला की दूकान के सामने ही अपनी दूकान खोल दी। सब लोग वांग ला की दूकान से ही टोपियाँ खरीदने लगे थे।

एक दिन चांग ला आराम से अपनी दूकान में बैठा था। उसने वांग ला की दूकान में एक सन्यासी को जाते देखा। उस सन्यासी के पास सोने जैसा चमकनेवाला हिरण का चमड़ा था। उसने वह चमड़ा वांग ला के हाथ दिया और उससे एक झोली सीने को कहकर अपने रास्ते चला गया।

वांग ला ने सन्यासी के कहे मुताबिक़ दिन भर मेहनत करके, झोली सी दी और उसको दूकान में एक दीवार पर लटका दिया। मगर दूसरे दिन से वांग ला गाँववालों

कुमारी तुलसी सक्सेना

से पैसे लिये बिना उन्हें टोपियाँ सीकर देने लगा और जो भी सन्यासी दिखाई देता, उसे दावत भी देने लगा।

चांग ला ने सोचा कि वांग ला तो अभी नया-नया आया है। वह खूब दान करता है। इसके पीछे कोई रहस्य होगा। उसका पता लगा लेना चाहिए।

एक दिन वांग ला ने अपनी दूकान बंद की, तब चांग ला वांग ला की दूकान के पास जाकर उसके छेदों से भीतर झांकने लगा। भीतर वांग ला सन्यासी के वास्ते तैयार की गई झोली को झाड़ रहा था, उसमें से सोने के सिक्के गिर रहे थे।

चांग ला अपनी आँखों पर विश्वास न कर पाया। दूसरे दिन भी उसने यही दृश्य देखा तो उस झोली को हड़पने की इच्छा चांग ला के मन में पैदा हुई।

दूसरे दिन वांग ला किसी काम से अपनी दूकान के भीतर जब चला गया, तब चांग ला वांग ला की दूकान में घुस पड़ा और दीवार पर लटकने वाली झोली को उठाकर उसकी जगह एक नक़ली झोली लटका कर अपनी दूकान को लौट आया।

उस दिन शाम को चांग ला ने अपनी दूकान बंद की, तब चुराई गई उस झोली को झाड़ दिया। आश्चर्य की बात यह थी कि झोली में से सोने के सिक्के गिरे नहीं, बल्कि चांग ला के घर के सोने की चीजें सब गायब हो गईं।

चांग ला घबरा गया। वांग ला के यहाँ जाकर सारा समाचार सुनाया और उसकी रक्षा करने की मिन्नत की। वहाँ पर लोगों की भीड़ जमा हो गई। उस वक़्त भीड़ में से एक सन्यासी आया और बोला–"चांग ला, तुम्हें अपने पेशे के प्रति विश्वास नहीं है। आज से यही झोली तुम्हारी जीविका का आधार होगी।" यह कहकर सन्यासी गायब हो गया।

बस, उस दिन से चांग ला उस झोली को अपने कंधे से लटकाकर भीख माँगने लगा। लोग यही कहने लगे कि "पेशे का देवता" सन्यासी के रूप में आया था।

१५४. सफेद हाथी

ऐरावत को सफ़ेद हाथी बताते हैं। हाथियों में दुर्बल होने के कारण रंग विहीन चमड़ेवाले "आल्बिनो" हाथी भी होते हैं। श्याम देश में उन हाथियों को अत्यंत पवित्र मानते हैं। उनका विश्वास है कि ऐसे हाथियों में बुद्ध की आत्मा होती है। जंगलों से सफ़ेद हाथियों को पकड़ लाने पर बौद्ध पुजारी कहते हैं–"तुम लोग फिर से जंगलों में मत जाओ।" कहा जाता है कि श्याम देश के एक राजा ने एक अपने ऐसे सेवक को एक सफ़ेद हाथी पुरस्कार में दिया था, जिससे वह नाराज़ था। वह सेवक उस हाथी को पालते-पालते कंगाल हो गया।
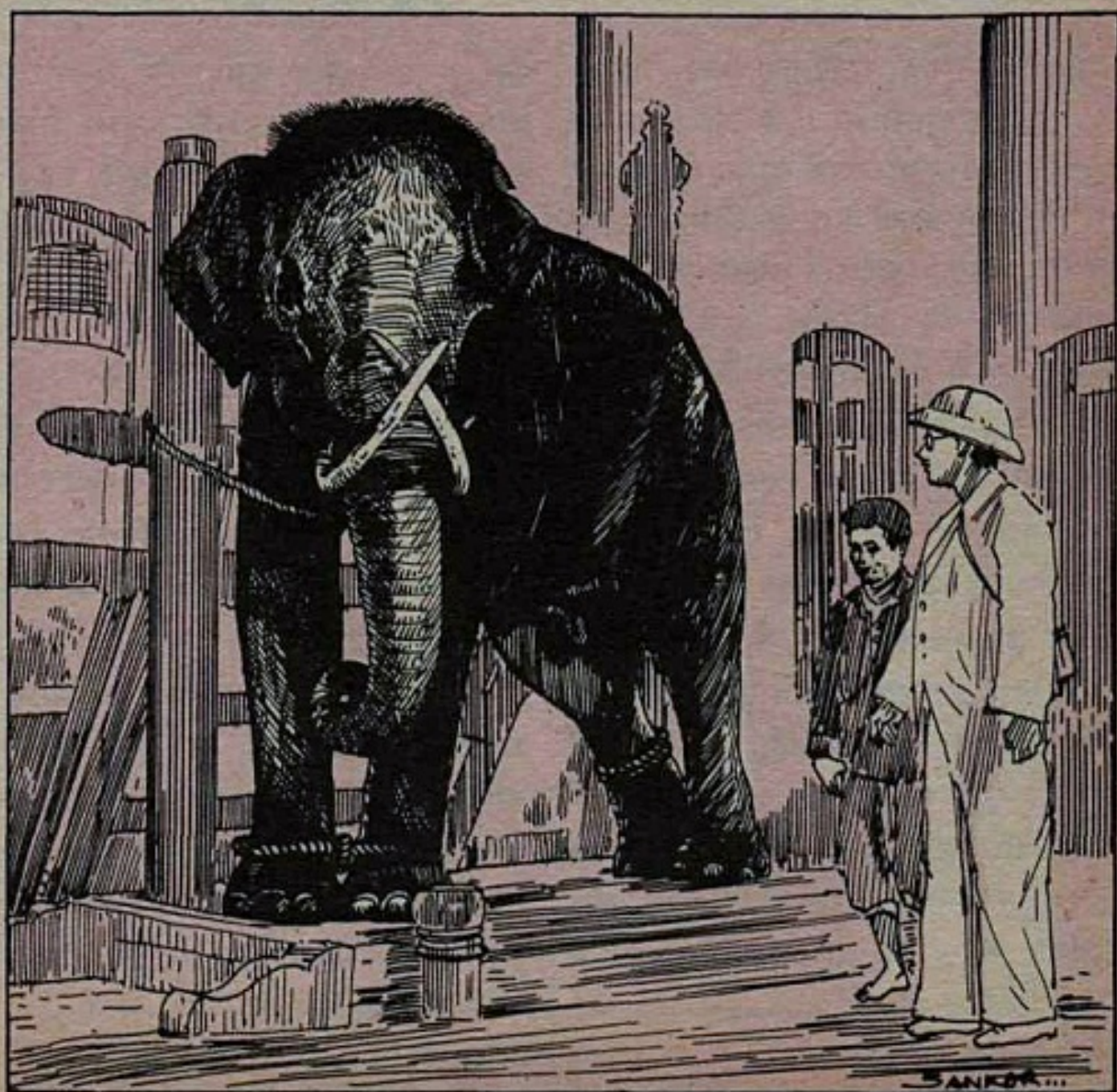
घर के चोर

चन्द्रतल नामक राज्य पर राजा वीरपाल शासन करता था। अपनी प्रजा को सुखी रखने तथा अपने शासन में पूर्ण रूप से न्याय को अमल करने के निमित्त उसने अनेक प्रबंध किये। जनता की सुख-सुविधाओं का पर्यवेक्षण करने के लिए राज्य भर में कई अधिकारी नियुक्त किये गये। जनता की समस्याओं का पता लगाकर उन्हें सुलझाना उन अधिकारियों का काम था। राजा ने एक संचार सलाहकार को भी नियुक्त किया जिस का काम था कि सारे देश में भ्रमण करके इस बात का पता लगावे कि शासन ठीक से चल रहा है कि नहीं, और उसकी सूचना राजा को दे।

संचार सलाहकार राज्य के विभिन्न प्रदेशों में भ्रमण करके लौट आता और सूचित करता कि वह जिन जिन प्रांतों में गया वे सारे प्रांत सुखी एवं संपन्न हैं और राजा की कामना के अनुरूप राज्य का शासन चल रहा है। इसी प्रकार प्रांतों के अधिकारी भी तीन महीनों में एक बार राजधानी में आते, राजा को अपने प्रतिवेदन समर्पित करते। अपने प्रांत के शासन के बारे में विवरण देते, राजा को यह भी सुझाव देते कि अपने प्रांत में क्या क्या सुविधाएँ करनी हैं, उनका व्यय कितना होता है, इत्यादि विस्तार से समझाकर राजा से धन लेते और अनुमति भी प्राप्त करते थे।

राजा इससे संतुष्ट न होता था, बल्कि वर्ष में एक बार सारे देश के ग्रामों के अधिकारियों का राजधानी में स्वागत करता, तीन दिन तक उन्हें दावत देता, अंत में प्रत्येक व्यक्ति को सोना भेंट करते पूछा करता–"क्या तुम कुशल हो? तुम्हारे

जगमोहन भाटिया

ग्राम वासी सब कुशल हैं न? मेरी प्रजा को किसी प्रकार की तक़लीफ़ नहीं है न?"

पर हर व्यक्ति यही जवाब देता– "महाराज, आप जैसे उदार एवं आदर्श नरेश के रहते हमारे लिए कमी किस बात की? सब लोग कुशल एवं प्रसन्न हैं!"

राजा भ्रमण में जाता तो हर प्रदेश में उसका भव्य स्वागत होता। जनता राजा का जयकार करती, राजा को अपना देश संपन्न दिखाई देता।

एक वर्ष राजा सभी ग्रामाधिकारियों को दावत दे रहा था। उस दावत में एक बूढ़ा सन्यासी भी उपस्थित हुआ। सब के साथ उसको भी सभी पदार्थ परोसे गये। मगर उस सन्यासी ने पत्तल में परोसे गये सभी पदार्थों को ज़मीन पर हटा दिया, और पत्तल को चाटने लगा। दावत में उपस्थित सभी लोग आश्चर्य के साथ सन्यासी की ओर ताकने लगे। पत्तल के फटने तक सन्यासी चाटता रहा, तब वह उठकर वहाँ से चला गया।

यह खबर जब राजा के कानों में पड़ी तब राजा ने उस सन्यासी को बुलवाकर पूछा–"आप खाने के लिए आये, मगर बिना खाये चले जा रहे हैं, ऐसा क्यों? क्या मेरा अपमान करना चाहते हैं? या इसके पीछे कोई कारण भी है?"

"इस में आप के लिए अपमान की बात कोई नहीं है! मैं अनेक देश घूम आया हूँ। मगर इस देश के जैसे दरिद्र और निकृष्ट

देश को मैंने कहीं नहीं देखा। आप के अधिकारी आपकी प्रजा को चूस कर सता रहे हैं। कड़ी मेहनत करके कमाने पर भी आप की प्रजा की कमाई कर चुकाने के लिए पर्याप्त नहीं हो रही है। इसलिए आप की प्रजा झूठे पत्तल चाट कर जी रही है। उनकी दयनीय हालत देखने के बाद आप की दावत का खाना कैसे मैं खा सकता हूँ? यह दावत आप की प्रजा के लिए अपमानजनक है। आप अपने ग्रामाधिकारियों को सोने का जो दान कर रहे हैं, वह आप की प्रजा के काम में किस प्रकार उपयोगी हो सकता है? आप के अधिकारी घूस लेकर सुखी हैं। वे जनता की विपदा को आप को कैसे सुना सकते हैं? आप से भी उन्हें घूस ही मिल रहा है। आप से घूस पाकर ये लोग आप की बड़ाई करेंगे ही। आप भी अपनी तारीफ़ सुनकर प्रसन्न हो जायेंगे।" ये शब्द कहकर सन्यासी वहाँ से चला गया।

ये बातें सुनने पर राजा विस्मय में आ गया। उसने जो कुछ सोचा था, वह तो उल्टा हो गया। उसने तुरंत सभी प्रांतों में गुप्तचरों को भेजा, तब उसे मालूम हुआ कि सन्यासी ने जो कुछ कहा, वह सब सही है। उन्हीं गुप्तचरों ने घूस लेने वाले अधिकारियों को पकड़ा दिया। अंत में यह स्पष्ट हुआ कि संचार सलाहकार सब से ज्यादा भ्रष्टाचारी है और उसने इस पद का अनुचित लाभ उठाकर अपार धन का संग्रह किया है।

राजा ने घूस लेनेवाले सभी अधिकारियों के ओहदे घटा दिये, अनुचित रूप से उन लोगों ने जो धनार्जन किया था, उसे ज़ब्त कर लिया और नये अधिकारियों को नियुक्त करके उन पर निगरानी करने के लिए गुप्तचरों का प्रबंध किया। जब तब राजा स्वयं वेष बदल कर सभी प्रांतों में जाता, लोगों के बीच घूमते अपने राज्य के भीतर घूसखोरी तथा भ्रष्टाचार का निर्मूलन किया। इस तरह आदर्श शासन का प्रबंध किया।

दूध का व्यापार

एक गाँव में शिवनाथ नामक एक युवक था। वह बड़ा ही नटखट था। इसलिए गाँववाले उसको पसंद न करते थे। वह पढ़-लिख भी न पाया।

एक बार उस गाँव में एक मशहूर ज्योतिषी आया, उसने गाँव के बीच में स्थित एक बरगद के नीचे अपना डेरा डाला। शीघ्र ही यह खबर सारे गाँव में फैल गई कि ज्योतिषी भविष्य बतलाने में बेजोड़ है। शिवनाथ ने भी अपना भविष्य जानना चाहा। उसने ज्योतिषी के सामने पहुंच कर अपना हाथ बढ़ाया।

ज्योतिषी ने शिवनाथ का हाथ अपने हाथ में लेकर देखा, झट उसे हटाते हुए कहा–"मैंने अपनी ज़िंदगी में ऐसे क़िस्मतवर का हाथ आज तक न देखा। तुम मिट्टी को भी छुओगे तो सोना बन जाएगी। बड़े आदमी बन जाओगे।"

इन बातों पर खुद शिवनाथ भी यक़ीन नहीं कर पाया। गाँववाले तो हंस पड़े। इस पर ज्योतिषी ने उन्हें समझाया–"शास्त्र कभी झूठा नहीं हो सकता। यदि क़िस्मत ने साथ दिया तो किया हुआ अपराध भी वरदान बन सकता है।"

गाँववालों ने शिवनाथ का परिहास किया था, इसलिए शिवनाथ ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि किसी भी तरह उसे बड़ा आदमी बन जाना चाहिए। मगर बड़ा आदमी बनने का उपाय वह जानता न था।

जान-पहचान के किसी व्यक्ति ने शिवनाथ को सलाह दी–"पहले तुम थोड़ा-बहुत धन कमाओगे तो बड़प्पन तुम्हारी खोज करते अपने आप आ जाएगा।" लेकिन शिवनाथ धन कमाने का तरीक़ा भी नहीं जानता था। वह काम-धाम

हरीश डिमरी

करना जानता न था, उल्टे पढ़ा-लिखा भी न था।

शिवनाथ को लगा कि गाँववालों का उसके प्रति अच्छा विचार नहीं है, इसलिए पहले उसे गाँव को छोड़ देना चाहिए। एक दिन सवेरे वह अपने गाँव को छोड़ चल पड़ा। जंगल में प्रवेश करके चलता गया। एक जगह एक पेड़ के नीचे कोई व्यक्ति सोते हुए उसे दिखाई दिया। सोनेवाले व्यक्ति की बगल में एक बड़ी तलवार और एक गठरी भी थी।

शिवनाथ ने गठरी खोलकर देखी। उस में सोने के सिक्के भरे थे। उसे ज्योतिषी की बातें याद आईं। फिर क्या था, उस गठरी और तलवार को लेकर भाग खड़ा हुआ।

इस बीच सोनेवाला व्यक्ति उठ बैठा। असली बात जान कर वह शिवनाथ का पीछा करने लगा। शिवनाथ ने घूम कर देखा। उसे लगा कि वह उस व्यक्ति से बच कर भाग नहीं सकता। वह रुका। इतने में वह व्यक्ति उसके निकट आया। शिवनाथ ने तलवार उठाकर उस आदमी की छाती में भोंक दी। वह आदमी चीत्कार करके वहीं पर गिर पड़ा।

वह आदमी थोड़ी देर तक छटपटाता रहा, फिर उसने दम तोड दिया। इसे देख शिवनाथ सन्न रह गया। उसने चोरी के साथ हत्या भी की है। फिर भी वह अपने हाथ लगे सोने को त्यागना नहीं चाहता था। वह तेजी से चल पडा। घंटे भर चलकर जगल को पार करके वह एक गाँव में पहुँचा।

उस गाँव में सबसे पहले जिस व्यक्ति ने शिवनाथ को देखा, उसने पूछा—"तुम्हारे कपड़ों में यह खून कैसा?"

तब तक शिवनाथ नहीं जानता था कि उसके कपड़ों पर खून लगा है। उसने झट जवाब दिया—"किसी चोर ने मेरा धन लूटना चाहा, मैंने उस पर तलवार चलाई। बस, उसी का खून है।"

पल भर में यह खबर सारे गाँव में फैल गई। गाँव के कुछ लोग शिवनाथ के बताये स्थान पर जंगल में पहुँचे। वह मृत व्यक्ति और कोई न था, बल्कि "काल यम" नामक एक नामी डाकू था। राजा ने भी यह ढिंढोरा पिटवाया था कि जो आदमी उस डाकू को मारेगा, उसको दस हज़ार सिक्कों का इनाम दिया जाएगा। यह बात गाँव के लोगों ने शिवनाथ को बताई और जयकारों के साथ उसको अपने गाँव में ले आये। यह जानकर कि शिवनाथ का अपना कोई गाँव नहीं है, सबने उसको अपने ही गाँव में रह जाने का अनुरोध किया। शीघ्र ही उसे राजा का इनाम भी प्राप्त हुआ।

अब शिवनाथ के पास काफ़ी धन था, मगर बड़ा आदमी बनने के लिए वह पर्याप्त न था और अधिक धन कमाने के ख्याल से उसने व्यापार करना चाहा। कई भैंसें ख़रीद कर दूध का व्यापार शुरू किया। यह व्यापार फ़ायदे मंद था और ज़्यादा लाभ उठाने के लिए वह दूध में पानी मिला कर बेचने लगा।

इस व्यापार में एक छोटी अड़चन पैदा हो गई। वह यह कि शिवनाथ जिस गाँव में रहता था, उस गाँव के लिए पानी का प्रबंध न था। ग्रामवासी दूर की नदी से पानी लाया करते थे। जो लोग ख़ुद पानी न ला सकते थे, वे अधिक मज़दूरी देकर मंगवा लेते थे। शिवनाथ भी स्वयं पानी ख़रीदता था। ज्यों ज्यों उसका दूध का व्यापार बढ़ता था, त्यों त्यों उसे ज़्यादा पानी की भी ज़रूरत पड़ी। अधिक मज़ूरी देकर पानी ख़रीद करके दूध में मिला कर बेच दे तो लाभ का अंश घट जाएगा। अलावा इसके यदि शिवनाथ पानी ज़्यादा ख़रीद ले तो उसके दूध में पानी मिलाने की बात खुल जाएगी।

इसलिए शिवनाथ ने अपने पिछवाड़े में ही एक कुआँ खुदवाना चाहा। यह काम गुप्त रूप से होना था। इसलिए उसने

पड़ोसी गाँव से मजदूरों को बुलवा भेजा और कुआँ खुदवाया। उसकी क़िस्मत इस काम में भी खुल गई। उस गाँव के अनेक लोगों ने कुएँ खुदवाये, पर किसी के कुएँ में भी पानी न आया। मगर शिवनाथ के कुएँ में दस फुट की गहराई में ही मीठा पानी निकल आया। कुएँ के खोदने का काम समाप्त होते ही उसने मज़दूरों को गुप्त रूप से भेज दिया। अब उसे पानी खरीदने की ज़रूरत न रही। मगर वह अपने घर के उपयोग के लिए थोड़ा पानी अब भी ख़रीदता था।

फिर भी शिवनाथ के दूध के बारे में गाँववालों में शंका पैदा हो गई। उसने बताया कि भैंसों में ही कोई खराबी है। पर गाँववालों ने यह बात भी मान ली। फिर भी उसकी भैंसों का दूध बिलकुल अच्छा न लगता था। शिवनाथ के साथ स्पर्धा न कर सकने की हालत में दूध का व्यापार करनेवाले सब लोग उस गाँव को छोड़ चले गये। इसलिए उस गाँववालों को शिवनाथ के यहाँ से दूध खरीदने के सिवाय कोई दूसरा उपाय न था।

इस हालत में गाँव के एक साहसी युवक ने राजा के पास जाकर शिवनाथ की शिकायत की और यह भी निवेदन किया कि शिवनाथ का काफ़ी नाम है, इसलिए तहक़ीक़ात गुप्त रूप से हो जाय तो अच्छा होगा। राजा के एक गुप्तचर ने शिवनाथ के दगे का पता लगाया।

राजा ने शिवनाथ को बंदी बनाया। न्यायालय में खड़ा करके राजा ने पूछा— "यह साबित हो गया है कि तुम दूध में ज्यादा पानी मिलाकर बेचते हो। इसका तुम क्या जवाब दोगे?"

"महाराज, आप आज्ञा दीजिए कि मैंने कैसी मिलावट की है?" शिवनाथ ने पूछा।

"तुम ने दूध में पानी मिलाया।" राजा ने कहा।

"महाराज! मैंने दूध में पानी नहीं मिलाया। पानी में ही दूध मिलाया।

चाहे तो आप मंगवाकर देख लीजिए! मैं जो पानी बेचता हूँ, उस में दूध की अपेक्षा पानी ही ज्यादा है।" शिवनाथ ने जवाब दिया।

न्यायालय में उपस्थित सभी लोग हंस पड़े। "यह तो और अन्याय है!" राजा ने कहा।

"महाराज! मैं पानी का व्यापारी हूँ, लेकिन दूध का व्यापारी नहीं हूँ। हमारे गाँव के लोगों की खास जरूरत पानी की है, उसके वास्ते वे लोग काफ़ी धन खर्च कर रहे हैं।" शिवनाथ ने समझाया।

शिवनाथ के मुँह से ये शब्द सुनते ही उस गाँव के मुखिये ने राजा से कहा– "महाराज, यह बात सच है! शिवनाथ साधारण व्यक्ति नहीं है। इसने कालयम नामक डाकू से हम को बचाया है। ऐसा व्यक्ति मिलावट का व्यापार करता है, यह बात विश्वास करने की नहीं है। मुझे लगता है कि हमारे गाँव के लिए पानी की जो तंगी है, उसकी ओर आपका ध्यान आकृष्ट करने के लिए ऐसा किया होगा।"

ये बातें सुनकर राजा क्रोध में आ गया और गरज कर बोला–"आज तक तुम लोग क्या कर रहे थे? मेरी सेवा में प्रार्थना-पत्र क्यों नहीं भेजा?"

"महाराज! हमने कई प्रार्थना-पत्र भेजे, मगर आपके अधिकारी जनता के अपराधों के दर्याप्त में जो दिलचस्पी ले रहे हैं, वह दिलचस्पी जनता की प्रार्थनाओं पर लेते प्रतीत नहीं होते।" गाँव के मुखिये ने कहा।

इसके बाद राजा ने शिवनाथ को मुक्त किया, उसकी प्रशंसा की। उसे इनाम दिये, तब नदी से शिवनाथ के निवास करनेवाले गाँव तक एक नहर खुदवाई। गाँववालों ने यही सोचा कि शिवनाथ की कृपा से ही उन्हें वह नहर प्राप्त हो गई है। इसके बाद शिवनाथ ने यश और प्रतिष्ठा के साथ करोड़ों रुपये कमाया। गलत रास्ते से धन कमाना छोड़ विवाह किया और आराम से अपने दिन व्यतीत करने लगा।

तीन पिशाच

एक अमावास्या की अर्द्ध रात्रि के समय एक बूढ़ा नर पिशाच एक श्मशान की ओर आ धमका। वहाँ पर एक उजड़ी समाधि के पास एक जवान पिशाचिनी नाच रही थी। बूढ़ा नर पिशाच ने नाच की तारीफ़ की।

जवान पिशाचिनी ने बूढ़े पिशाच की ओर परख कर देखा और कहा–"लगता है कि तुम नये नये इस ओर आये हो!"

"हाँ, हाँ! हम दोनों मिलकर साथ रहेंगे। जो कुछ देखना है, वह सब तुम मुझे दिखा दो।" बूढ़े पिशाच ने कहा।

जवान पिशाचिनी बूढ़े पिशाच को सारी समाधियाँ दिखाते हुए उनका वर्णन करती गई। दोनों सारा श्मशान घूमकर जब एक पेड़ के नीचे आये तब वहाँ पर एक मादा पिशाचिनी अपने सिर को पीछे की ओर मोड़कर अपनी जीभ को हाथ भर लंबा फैलाये हुए बैठी थी।

"वाह! वाह! क्या खूब है?" उस पिशाचिनी की तारीफ़ करते दोनों एक साथ बोल उठे–"आज से हम तीनों मिलकर एक साथ रहेंगे।" मादा पिशाचिनी बाक़ी पिशाचों का सारा हाल जानकर उनके साथ मिलने को तैयार हो गई।

मगर उनके सामने एक समस्या पैदा हो गई। वह यह कि इस दल का नेतृत्व कौन करे? इस पर बड़ी देर तक चर्चा चली, तब वे तीनों एक निर्णय पर पहुँचे। वह निर्णय यह था, तीनों को तीन दिन प्रत्येक को एक महत्व पूर्ण कार्य करना है। तीनों के कार्यों में जिसका काम सब से ज्यादा महत्वपूर्ण होगा, वही उन लोगों का नेता होगा।

दिलीप पारीख

बूढ़े पिशाच ने बाक़ी पिशाचिनियों से कहा–"हम कल आधी रात को यहीं पर मिलेंगे। इस बीच मैं कोई बड़ा काम करके तुम लोगों से बताऊँगा।"

इसके बाद तीनों पिशाच अपने अपने रास्ते चले गये।

दूसरे दिन रात को दूसरे पहर का वक़्त था। बूढ़ा पिशाच श्मशान के प्रदेश में भटक रहा था। उसने अब तक कोई बड़ा काम न किया था। उसने देखा कि एक पेड़ के नीचे कोई युवक सिकुड़े लेटा हुआ है। वह कोई अनाथ मालूम होता था। जाड़े में कांप रहा था। ओढ़ने को उसके पास कुछ न था। फिर भी वह गहरी नींद सो रहा था।

उस युवक का नाम मदन था। उसके माँ-बाप बचपन में ही मर गये थे। उसका एक रिश्तेदार था, मगर उसे पालने पर अपनी कन्या के साथ उसका विवाह करना पड़ेगा, यह सोचकर उसने उस युवक को अपने घर नहीं रखा। इसलिए मदन रात के वक़्त किसी पेड़ के नीचे लेट कर सोया करता था।

मदन को देखते ही बूढ़े पिशाच के दिमाग में कोई विचार सूझ पड़ा। उसने एक पुराना कंबल लाकर मदन पर ओढ़ा दिया। कुछ ही मिनटों में कंबल गरम हो गया। फिर भी मदन घोड़े बेचकर सोनेवाला था, इसलिए उसकी नींद न खुली। इस तरह गरम होकर कंबल

अचानक जलकर धधक उठा और गायब हो गया, तब भी मदन नींद से न जागा। लेकिन उसका रूप बदल गया था। वह इस वक़्त देखने में ज्यादा सुंदर था।

इस परिवर्तन को देख बूढ़ा पिशाच संतुष्ट हो गया। आधी रात के वक़्त बाक़ी दोनों पिशाचिनियों से मिलकर अपने महत्व पूर्ण कार्य का परिचय दिया। दोनों पिशाचिनियों ने बूढे पिशाच की करनी की तारीफ़ की।

इस बार जवान पिशाचिनी ने एक करिश्मा दिखाने की बात कही।

सवेरा हो गया। मदन जाग उठा। अपने रास्ते चल पड़ा। उसका रिश्तेदार मदन के भीतर इस सुंदर परिवर्तत को देख विस्मय में आ गया और उसको सीधे अपने घर ले गया।

जवान पिशाचिनी ने उस रिश्तेदार की पत्नी के मुंह से पुछवाया–"तुम इस दरिद्र को अपने साथ क्यों ले आये हो?"

"क्यों कि अपनी कन्या का विवाह इसके साथ करना चाहता हूँ। देखती हो न, इस वक़्त मदन कैसा सुंदर है!" मदन को घर के भीतर ले जाते हुए रिश्तेदार ने कहा।

उसकी पत्नी ने जवान पिशाचिनी की प्रेरणा से कहा–"इस कमबख्त को ज़हर खिलाकर इसका पिंड छुड़ाऊँगी।"

मगर ये बातें उसकी कन्या ने सुन लीं, उसने गुप्त रूप से मदन से मिलकर घबड़ाये स्वर में कहा–"तुम यहाँ से भाग जाओ। माँ तुमको मार डालना चाहती है।"

मदन जान के डर से भाग गया। शाम के होते-होते वह जंगल के बीच एक सुंदर महल के पास पहुँचा। उस महल के भीतर से कई परिचारिकाएँ बाहर आईं, मदन को भीतर ले जाकर गुलाब जल से नहलाया। रेशमी वस्त्र पहना कर मिस्टान्न खिलाये। तब रेशमी गद्दों पर लिटाया।

जवान पिशाचिनी ने यह सारा प्रबंध किया, तब अर्द्ध रात्रि के समय बाक़ी दोनों

पिशाचों से मिलकर अपने महत्व पूर्ण कार्य का परिचय दिया। दोनों ने जवान पिशाचिनी की करनी की तारीफ़ की।

अब मादा पिशाचिनी की बारी थी। वह सीधे राजमहल में पहुँची। वहाँ पर राजा अपनी पुत्री के साथ नाश्ता करते बातचीत कर रहा था।

अचानक राजकुमारी ने अपनी आँखें लाल-पीली करके अपने पिता से पूछा—"तुम मेरी शादी कब करोगे?"

राजा चकित रह गया। इसके पिछले दिन ही राजा ने अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव किया तो उसने साफ़ कह दिया था कि एक वर्ष तक उसकी शादी की बातें मन में न लावे।

उसी युवती ने अब अपने पिता को देख यह कहते रोना शुरू किया—"पिताजी, आप चकित क्यों हैं? जंगल के बीच एक सुंदर महल में मदन मेरा इंतज़ार कर रहा है। आप यदि उसको यहाँ बुलवा कर उसके साथ मेरा विवाह न करेंगे तो मैं ही खुद वहाँ पर चली जाऊँगी।"

राजा को कुछ करते न सूझा। आखिर एक छोटे से परिवार को लेकर चल पड़ा। सचमुच जंगल के बीच एक सुंदर महल था। उस में अत्यंत सुंदर युवक मदन दिखाई दिया। राजा उसको देख बड़ा प्रसन्न हुआ। उसको तुरंत राजधानी में ले आया और अपनी कन्या के साथ उसका विवाह किया। इस प्रकार मादा

पिशाचीनी ने भी एक बड़ा काम साध लिया।

उस रात को जब तीनों पिशाच मिले, तब मादा पिशाचिनी ने कहा–"तुम लोगों से बड़ा काम मैंने किया है। इसलिए हमारे दल का नेतृत्व मुझे मिलना चाहिए।"

"बस करो! मदन का महल और वैभव देख राजा ने उसके साथ अपनी कन्या का विवाह किया है। इसलिए सब से बड़ा काम मैंने किया है।" जवान पिशाचिनी ने कहा।

"तुम दोनों अपने मुंह बंद कर लो! मदन को सुंदर मैंने बनाया है। अलावा इसके उम्र में भी मैं बड़ा हूँ। मुझे ही इस दल का नेता बनना है!" बूढ़े पिशाच ने कहा।

तीनों पिशाच इस प्रकार बड़ी देर तक झगड़ते रहें। आखिर मदन के मुंह से ही फ़ैसला सुनने के ख्याल से चल पड़े।

मदन राजमहल में रेशमी के गद्दों पर आराम से सो रहा था। पिशाचों ने जाकर उसको जगाया और अपने परिचय दिये।

"तुमको मैंने सुंदर बनाया है।" बूढ़े पिशाच ने कहा।

"तुमको ऐश्वर्यवान मैंने बनाया है।" जवान पिशाचिनी ने कहा।

"तुमको राजा का दामाद मैंने बनाया है।" मादा पिशाचिनी ने जोर देकर कहा।

"हम तीनों में से किसका काम महान है? तुम्हीं बताओ?" तीनों ने एक स्वर में पूछा।

मदन गुस्से में आया, डांटते हुए बोला–"तुम लोगों ने अपने इस बेमतलब के झगड़े का फ़ैसला करने के लिए मेरी मीठी नींद बिगाड़ दी। जाओ, यहाँ से तुरंत चले जाओ! आइंदा ऐसी बेवकूफ़ी के काम मत करो।"

पिशाचों ने अपमान का अनुभव किया–"हम तीनों मिलकर रहेंगे तो न मालूम इस प्रकार की बेवकूफ़ी के काम और कितने कर बैठेंगे? इसलिए हमें अलग-अलग रहना ही उत्तम है।" यह निर्णय करके तीनों अपने अपने रास्ते चले गये।
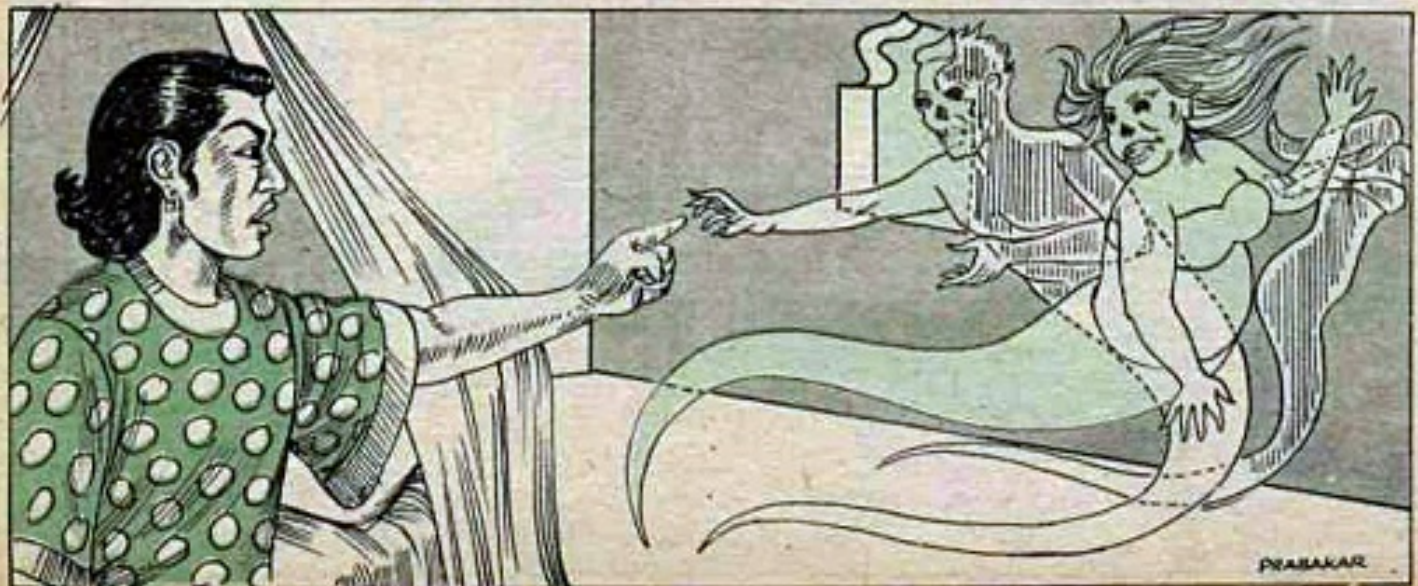
झगड़ालू पत्नी

बंगाल के एक गाँव में ललिताचार्य नामक एक ब्राह्मण पंडित था। उसके शिष्य कई गाँवों में फैले हुए थे। ललिताचार्य जब तब दो-तीन दिनों के लिए पर्यटन पर चल पड़ता और अपने शिष्यों से दक्षिणाएँ वसूल कर आराम से अपने दिन बिता देता था।

ललिताचार्य की पत्नी सुरभि अव्वल दर्जे की झगडालू थी। वह सदा अपने पति को कोसती और पल भर के लिए उसको शांत रहने न देती थी। वह अड़ोस-पड़ोसवालों से भी झगड़ा करती थी। उसकी वजह से ललिताचार्य के मन में गृहस्थी के प्रति घृणा पैदा हो गई। वह जब अपने शिष्यों के यहाँ जाता तभी उसके मन को थोड़ी-बहुत शांति मिलती।

वास्तव में सुरभि के मन में अपने पति के प्रति प्यार था, जब उसका पति गाँव से बाहर जाता, तब वह दुखी होती। उसका मन विकल रहता, वह अपने मन में क़सम खा लेती कि आइंदा वह अपने पति की बुराई कभी न करेगी। मगर फिर जब वह अपने पति को देखती, तब उसकी सारी क़समें हवा में उड़ जातीं। उसको पल भर के लिए भी आराम करने न देती, बस, उस पर टूट पड़ती, गालियाँ बकती। उसके एक लड़का और एक लड़की थी। वे दोनों अपने पिता पर रहम खाकर माँ से कहते कि वह शांत रहे, मगर उनकी बातें सुरभि के दिमाग में बैठती न थीं।

प्रारंभ में ललिताचार्य अपनी पत्नी को प्रसन्न रखने के लिए तरह-तरह के उपहार लाकर दिया करता था। लेकिन उन उपहारों का कोई फल न निकला। उसके स्वभाव में परिवर्तन लाना ललिताचार्य के लिए असंभव सा हो गया।

एक दिन दुपहर को ललिताचार्य भ्रमण से घर लौटा। उसी दिन किसी शिष्य ने एक बड़ी लौकी ला दी। तब तक सुरभि ने अपना खाना समाप्त कर बच्चों को खिलाया और वह भी लेट कर आराम करने लगी थी। ललिताचार्य ने बड़े ही प्यार से पत्नी के निकट जाकर कहा—"लो, देखो, मैं तुम्हारे लिए क्या लाया हूँ?"

"हाँ, तुम मेरे लिए क्या लाओगे? उसको बाहर फेंक दो। मुझे सोना है।" यों कहकर सुरभि करवट बदलकर फिर लेट गई।

ललित ने लौकी को उसके निकट ले जाकर कहा—"देखो, यह कितनी बड़ी है!"

"तुम अपना दरिद्र चेहरा मुझे मत दिखाओ। तुमने कभी अच्छी चीज़ों का चेहरा देखा हो तब न?" यों कहते सुरभि झट उठ खड़ी हो गई। अपने पति के हाथ से लौकी को खींच कर कूडा-करखट में डाल दिया।

इस घटना से ललिताचार्य के मन में जीवन के प्रति एक दम विरक्ति पैदा हो गई। उसने आत्महत्या करने का निश्चय किया और गंगा नदी की ओर दौड़ पड़ा। कमर में बड़ा पत्थर बांधकर ललित गंगा में कूदने को था, तभी उसके मित्र सोमनाथ ने दूर से देखा और उसको रोक दिया।

"ललित! यह तुम क्या करने जा रहे हो?" सोमनाथ ने पूछा।

"मेरे मन में अब जीने की इच्छा न रही। मैं अपनी पत्नी की करतूतों को आगे सहन नहीं कर सकता। मुझे मर जाने दो।" ललित ने कहा।

सोमनाथ ने समझाकर उसको सांत्वना दी, तब कहा—"तुम जानते हो कि मैं इंद्रजाल करना जानता हूँ। तुम्हारी तक़लीफ़ों को दूर करने का उपाय मैं करूँगा। मुझ पर विश्वास करो। यदि मैं अपने प्रयत्न में सफल न रहा तो तुम अपनी इच्छा के अनुसार कुछ भी कर सकते हो।"

"जो कुछ करना था, मैंने करके देखा। अब कोई फ़ायदा नहीं है।" ललित ने निराशा प्रकट की।

"निराश होना ठीक नहीं है। मैं अपने इस प्रयत्न में अवश्य सफल हो जाऊँगा।" सोमनाथ ने दृढ़ता के साथ कहा।

दोनों मित्रों ने एक पंक्ति में बैठकर भोजन किया, तब सोमनाथ की योजना पर चर्चा की। उस योजना का परिचय पाने पर ललित के मन में आशा का उदय हुआ।

उस दिन सूर्यास्त हो गया। एक जटाधारी मुनि ने ललित के घर में प्रवेश किया। उस वक़्त ललित की पत्नी सुरभि पूजा के मंदिर में दीपों से आराधना करते नये व्यक्ति को देख चौंक पड़ी।

"पापिन! अब भी तुम अपने को सौभाग्यवती मानती हो? तुम तो विधवा हो।" मुनि गंभीर स्वर में बोला।

"अबे दाढ़ीवाले! तुम यहाँ से चले जाओ। तुमसे किस क़मबख़्त ने कहा कि मैं विधवा हूँ? मेरे पति तो ज़िंदा हैं।" सुरभि ने उत्तर दिया।

"नहीं, वे प्राणों के साथ नहीं हैं। महाकाली के सामने अपना कंठ काटकर अपनी बलि स्वयं दी है! चाहे तो तुम मेरे साथ चलकर अपनी आँखों से देख लो।" मुनि ने कहा।

"यह बात तुमसे किसने बताई?" सुरभि ने पूछा।

"मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा है।" मुनि ने उत्तर दिया।

संदेह भरे मन को लेकर सुरभि मुनि के साथ कालीदेवी के मंदिर में गई। मंदिर के द्वार बंद थे। लेकिन खिड़की में से सुरभि ने उस भयंकर दृश्य को देखा। खून से लतपथ ललिताचार्य धरती पर पड़ा था। उसके कंठ में तलवार अटकी हुई थी। मरने की वजह से ललित का शरीर नीले रंग का हो चला था।

"उफ़! तुमने यह क्या किया?" इन शब्दों के साथ सुरभि रोने लगी। वह रोते-रोते अपना सिर दीवार से टकराने लगी।

उस वक़्त मंदिर के पुजारी ने आकर समझाया—"बहन! अब रोने-धोने से फ़ायदा ही क्या है? तुमने ज़िंदगी भर ललित को सताया। झगड़ने के सिवाय तुमने उसके लिए किया ही क्या? तुमसे तंग आकर ही उसने आत्महत्या की है।"

"हाँ, आप सच कहते हैं। मेरी वजह से ही उन्होंने आत्महत्या की है। मैं पापिन हूँ। मुझे भी जीवित नहीं रहना चाहिए। मैं भी मरकर अपना प्रायश्चित्त कर लूँगी।" यों कहते सुरभि और ज़ोर से दीवार के साथ सर पीटने लगी।

मुनि ने आगे बढ़कर उसको रोकते हुए कहा—"बहन! यदि तुम अपने पति के वास्ते अपने प्राण तक देने को तैयार हो तो पहले ही उनको तंग नहीं करना चाहिए था। उन्होंने तुम्हारे द्वारा कभी सुख नहीं भोगा।"

"महात्मा! मुझे क्षमा कर दीजिए! उनको सुख पहुँचाना मुझसे न बना। इसीलिए मैं उन्हीं के साथ मर जाऊँगी।" सुरभि बोली।

मुनि ने अपनी थैली में से एक विचित्र जड़ी निकालकर समझाया—"बहन, देखो! यह मृतसंजीवनी है! इसकी मदद से मैं तुम्हारे पति को फिर से जीवित कर सकता हूँ। लेकिन एक शर्त! तुमको

भविष्य में कभी उनके दिल को दुखाना नहीं चाहिए। दूसरों के साथ भी तुमको कभी झगड़ा नहीं करना चाहिए। तुम इस बात की शपथ कालीदेवी के सामने करो।"

सुरभि ने इसी प्रकार शपथ ली।

मुनि ने अपने गेरुए वस्त्र को उतारकर ललित के शरीर पर सिर से लेकर पैरों तक ओढ़ा दिया। कपड़े के नीचे हाथ ले जाकर जड़ी के साथ कुछ किया। थोड़ी देर बाद खून से सनी तलवार को ऊपर निकाला, धीरे से शव पर से गेरुए वस्त्र को हटाया।

ललित अभी तक निर्जीव था। मुनि ने उसके कंठ पर जड़ी छुआ दी। इस पर ललित के शरीर में थोड़ा कंपन हुआ और थोड़ी देर के पश्चात ललित कमजोरी का अनुभव करते इस तरह उठ बैठा, मानो नींद से जगा हो।

मंदिर के द्वार खोले गये। सुरभि ने भीतर जाकर अपने पति के चरणों पर गिरकर कहा—"आप मुझे क्षमा कीजिए! आइंदा में आपके दिल को दुखानेवाली एक भी बात न कहूँगी। कहिए, आप ने मुझे क्षमा कर दिया है।" इन शब्दों के साथ रोने लगी।

ललित सुरभि की ओर देख मुस्कराया।

मंदिर के यहाँ से दो आदमियों की सहायता लेकर सुरभि अपने पति को घर ले गई।
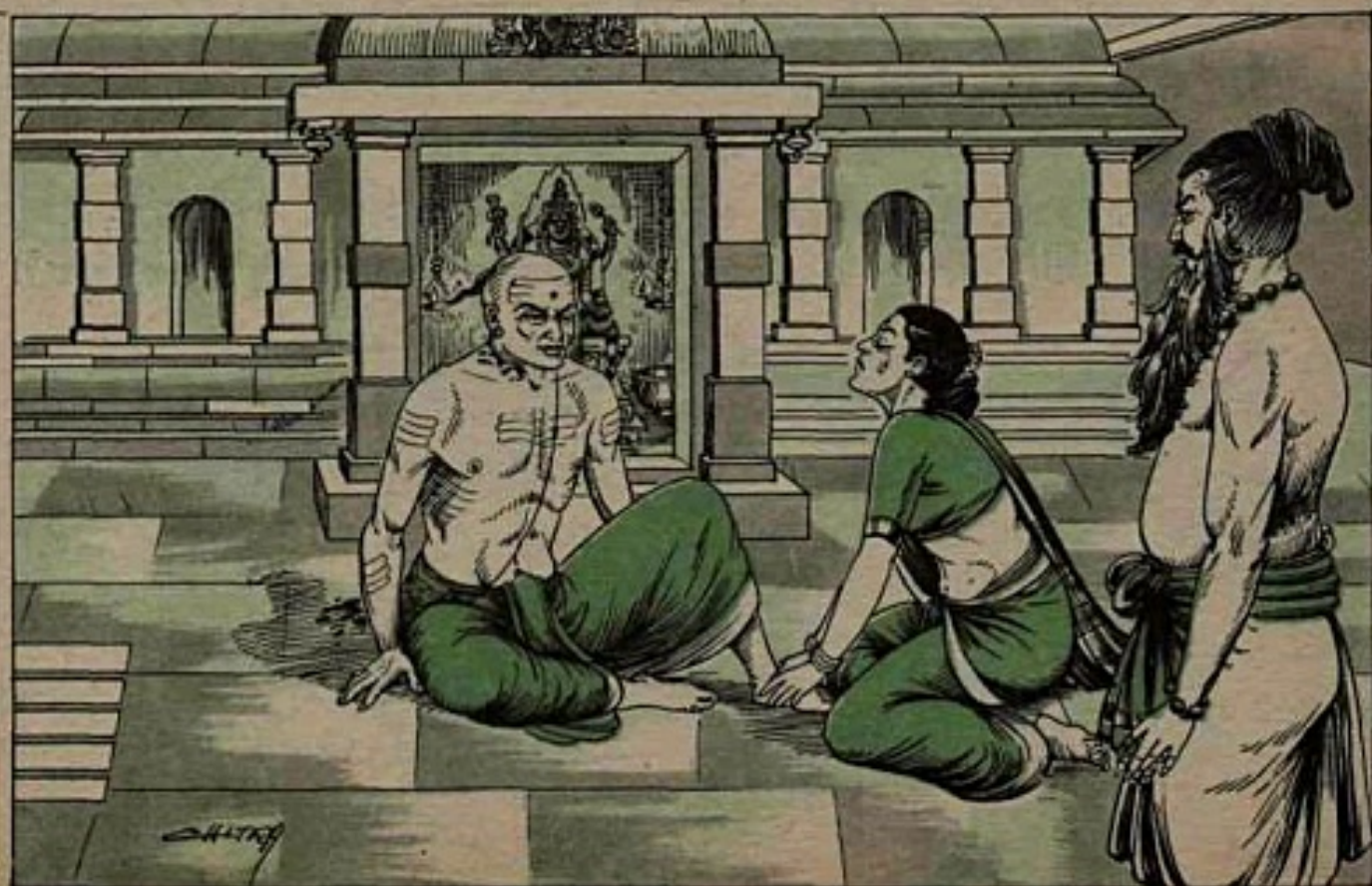
सब के चले जाने पर मुनि अपनी दाढ़ी, मूँछ हटाकर सोमनाथ के रूप में बदल गया।

"शास्त्रीजी! हमारी चाल चल निकली है न?" सोमनाथ ने पूजारी से पूछा।

"बिलकुल! अब सुरभि अपने पति के साथ कभी झगड़ा नहीं करेगी! मगर कंठ काटने का यह रहस्य कैसा?" पूजारी ने पूछा।

"इसमें कोई बड़ा रहस्य नहीं है! मैं इंद्रजाल के प्रदर्शनों में अकसर यह क्रिया करता हूँ। इन तलवारों को देख लीजिए! यह साधारण तलवार है! दूसरी तलवार इंद्रजाल के काम में लाई जानेवाली है। इसमें गोल भाग काटा गया है। यह भाग मनुष्य के कंठ से ठीक-ठीक सटा रहता है। मैंने इसको ललित के कंठ से सटा कर रखा। लाल रंग के द्वारा नक़ली खून तैयार करके छिड़का दिया। ललित के शरीर पर नीला रंग पोत दिया। साधारण तलवार को ललित के शरीर के नीचे छिपा कर रखा। मंदिर के दीपों की धुंधली रोशनी में हत्या का भ्रम पैदा करना और आसान है! ललित के शरीर पर मैंने जब वस्त्र-ओढ़ा दिया तब उसके शरीर के नीचे की साधारण तलवार को बाहर फेंककर वस्त्र के साथ नकली तलवार को हटाया। ललित ने भी अपने पात्र का अभिनय ठीक से किया है।" सोमनाथ ने समझाया।

"बात तो मार्के की है! मगर मेरी चिंता तो इस बात की है कि मंदिर में ऐसा काम हुआ है।" पूजारी ने शंका प्रकट की।

"इसमें चिंता करने की कोई बात नहीं है। हमने एक व्यक्ति के प्राणों की ही रक्षा नहीं की, बल्कि उसके जीवन को सुखमय भी बना दिया है। कालीदेवी इस पर बहुत प्रसन्न हो जायेंगी।" सोमनाथ ने कहा।

उस दिन से सुरभि ने फिर कभी ललित के साथ झगड़ा न किया और न उसने गाँववालों के साथ ही झगड़ा किया।

श्रम का मूल्य

पुष्पवंत नामक नगर का युवराज पर्णकेतु था। वह अकसर सपने देखा करता था। सपने में उसे कोई नागकन्या दिखाई देती और कहती–"तुम समुद्र के तट पर मेरी खोज करो।" ये शब्द कहकर वह मुस्कुरा देती और अदृश्य हो जाती।

इस प्रकार बार-बार सपने में नागकन्या के दिखाई देते रहने पर राजकुमार ने उसी कन्या के साथ विवाह करने का अपने मन में दृढ़ संकल्प किया। इसलिए वह अपने नगर के निकट में स्थित समुद्री तट पर एक दो बार इधर से उधर घूम आया, मगर उसे नागकन्या दिखाई नहीं दी।

इसलिए उसने अपने अंतरंग सखाओं को अपने सपने का समाचार सुनाया और समुद्री तट पर नागकन्या को ढूंढ़कर ले आने का आदेश दिया। उन लोगों ने नागकन्या की बड़ी खोज की, पर उसका पता लगा नहीं पाये।

इस पर पर्णकेतु ने एक ढिंढोरा पिटवाया कि जो व्यक्ति समुद्र के किनारे नागकन्या को ढूंढ़कर ले आयगा, उसको एक हज़ार सोने के सिक्के दिये जायेंगे। धन के लोभ में पड़कर कई हज़ार लोगों ने समुद्र तट को कई दिन छान डाला। कुछ लोग समुद्र में थोड़ी दूर तक तैरकर भी गये, पर किसी को भी कहीं नागकन्या दिखाई न दी।

राजा के मंत्रियों ने युवराज को समझाया–"युवराज! तुम इस भ्रम में क्यों पड़े हुए हो? यह सपना भी और सपनों की भांति एक भ्रम है। वह नागकन्या सच्ची नहीं है। अनावश्यक तुम क्यों परेशान हो?" राजकुमार

अर्चना कोछड़

को भी मंत्रियों की सलाह सही प्रतीत हुई।

नागकन्या की खोज करनेवालों में संगम नामक एक गरीब युवक भी था। बाक़ी सब लोगों ने अपना यह प्रयत्न त्याग दिया, लेकिन संगम ने अपने प्रयत्न को बराबर चालू रखा। नागकन्या के किसी को दिखाई न देने का कारण यह था कि सबने उसकी प्रतीक्षा की, मगर किसी ने सच्चे संकल्प से उसकी खोज़ न की। खोज़ने पर ही वह दिखाई दे सकती थी। अलावा इसके कोई यह नहीं जानता था कि उसका रूप कैसा है? संगम ने सोने के सिक्कों के वास्ते दृढ़ निश्चय के साथ नागकन्या की खोज की। वह समुद्र के किनारे ही टहलते हुए बालू में दिखाई देनेवाले कीड़े-मकड़ों को देख यह पूछता गया–"क्या तुम कहीं नागकन्या नहीं हो?" बालू में यदि कोई चीज़ दिखाई देती तो वह उसको बाहर निकालकर देख लेता, कहीं वह नागकन्या तो नहीं है?

संगम इस तरह दृढ़ निश्चय के साथ समुद्र के तट पर नागकन्या की खोज़ कर ही रहा था कि उसे बालू में आधा धंसकर चमकनेवाली कोई चीज़ दिखाई दी। संगम ने उसको बाहर निकालकर कुतूहलपूर्वक देखा, वह सोने की एक अंगूठी थी। उस पर मिट्टी जमी हुई थी। उसको धोने के ख़्याल से संगम पानी की ओर बढ़ा, मगर पानी उससे दूर हटता गया।

उसने पांच-दस क़दम और आगे बढ़ाये। समुद्र का पानी थोड़ा और पीछे हट गया।

संगम अत्यंत आश्चर्य के साथ आगे बढ़ता गया। पानी उसको रास्ता देते दूर तक ले गया।

अचानक उसे ये चिल्लाहटें सुनाई दीं– "आ गये, आ गये! मणिप्रवाली! तुम्हारे पति आ गये।" उसने सर उठाकर देखा तो अपने को एक बगीचे के मध्य में पाया। उस बगीचे में एक मंदिर था। बगीचे के पेड़ों तथा मंदिर में से चांदनी जैसी मृदुल कांति प्रसारित हो रही थी। मंदिर मणि-माणिकों से निर्मित प्रतीत हो रहा था।

मंदिर के भीतर कुछ नागकन्याओं ने आकर संगम का स्वागत करते कहा– "आइए, पधारिये!"

उसने मंदिर के भीतर प्रवेश किया, तब मणिप्रवाली नामक एक अद्भुत सुंदरी ने आगे बढ़कर उसका स्वागत किया और उसको स्वयं अपने निकट के एक आसन पर बिठाया।

"मेरे वास्ते तुमने काफ़ी श्रम उठाया। पहले अच्छे वस्त्र धारण करके भोजन करो।" सुंदरी ने कहा।

"मैंने श्रम जरूर उठाया है, पर तुम्हारे वास्ते नहीं, मेरे युवराज ने जिस पुरस्कार की घोषणा की, उसके वास्ते! तुम यदि मेरे साथ चलोगी तो तुमको हमारे युवराज

के हाथ सौंपकर पुरस्कार प्राप्त करूँगा। मैं इसी उद्देश्य को लेकर यह श्रम करता रहा।" संगम ने जवाब दिया।

"यह संभव नहीं है।" इन शब्दों के साथ मणिप्रवाली ने वास्तविक समाचार यों सुनाया :

"मैं और मेरी सखियाँ एक चांदनी रात में समुद्र के तट पर खेलने गईं। तब मेरी अंगूठी कहीं गिर गई। हमारा नियम है कि कन्या की पहनी हुई अंगूठी जिस पुरुष के हाथ लगे, वही उसका पति है। हमारे यहाँ की कन्यायें जिसके साथ विवाह करना चाहेंगी, उसके हाथ अंगूठी पहनाकर स्वयं वर लेती हैं। मेरी अंगूठी जिस पुरुष के हाथ में पड़ जाय, उस पुरुष को हमारे नागलोक में स्वेच्छा से आने लायक़ प्रबंध मेरे पिताजी ने पहले ही किया है। वह अंगूठी प्राप्त करनेवाला व्यक्ति कोई राजकुमार हो तो अति उत्तम होगा, इस ख्याल से मेरे पिता ने राजकुमार को सपने में मेरे दीखने लायक़ मौक़ा प्रदान किया। इस बात में मेरे पिता न भूल की। मेरी अंगूठी की खोज़ करना श्रम साध्य है। बड़े लोग इंद्रपद का लोभ दिखाने पर भी श्रम नहीं करते। तुम जैसे सहनशक्ति रखनेवाले तथा दृढ़ लगनवाले ही श्रम कर सकते हैं। तुमने विशेष श्रम उठाकर मुझको पत्नी के रूप में प्राप्त किया। तुम यदि सोना चाहते हो तो युवराज तुमको जितना देना चाहते हैं, उससे लाख गुना अधिक म दूंगी। अलावा इसके यह भी जान लो कि तुम्हारे साथ आकर भूलोक में निवास करना मेरे लिए असंभव है। इसलिए तुम्हीं यहाँ पर रह जाओ।"

संगम ने बड़ी खुशी से मान लिया। मणिप्रवाली के साथ विवाह करके नागलोक में ही रह गया।

इसके बाद पर्णकेतु को नागकन्या कभी सपने में दिखाई नहीं दी। वह शीघ्र ही उस कन्या को भूल गया, दूसरी राजकुमारी के साथ विवाह करके सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगा।

वीर हनुमान

प्राचीन काल में सुपर्वगिरि पर केसरी नामक एक बड़ा वानर था। उसी पर्वत पर साठ हज़ार वानर थे। केसरी उनका नेता था।

एक समय प्रभास तीर्थ में निवास करनेवाले मुनियों को शंख और शबल नामक दो हाथी सताया करते थे। इस पर केसरी ने उन दोनों हाथियों का वध किया। इसलिए उसका नाम केसरी (सिंह) सार्थक हो गया।

केसरी अत्यंत बलवान और भाग्यशाली था, फिर भी उसने ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर घोर तपस्या की और इस प्रकार अपनी तपस्या के बल पर अपार शक्तियाँ प्राप्त कीं।

उसी समय शंबसाधन नामक एक राक्षस ने घोर तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न किया और उनके द्वारा तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करने का वर पाया। उस दिन से वह अहंकारी बनकर मुनियों, सिद्धों तथा देवताओं को भी हद से ज्यादा सताने लगा।

देवताओं ने ब्रह्मा के पास जाकर बिनती की कि शंबसाधन के अत्याचारों से वे तंग आ गये हैं, अतः उनकी रक्षा करें। ब्रह्मा ने उन लोगों को केसरी के पास भेजा दिया। देवताओं ने केसरी के पास जाकर उसे आशीर्वाद दिया, अपनी यातनाओं का परिचय दे निवेदन किया—"वीर वर, हम शंब साधन से तंग आ

१. हनुमान का जन्म

गये हैं; तुम्हीं उस दुष्ट राक्षस से हमारी रक्षा करो।"

उसी वक़्त नारद ने शंबसाधन के यहाँ जाकर आशीर्वाद दिया–"शुभमस्तु!"

शंबसाधन ने नारद महर्षि को प्रणाम करके पूछा–"मुनिवर! आप कहाँ से पधार रहे हैं? कहाँ जा रहे हैं? कोई विशेष समाचार तो नहीं है न?"

"मैं हेमकूट से चला आ रहा हूँ। वहाँ पर इन्द्र आदि देवता तुम्हारा वध करने के लिए एक वानर से निवेदन कर रहे थे। यह समाचार तुम्हारे कानों में डालने के लिए यहाँ तक आया हूँ।" नारद ने उत्तर दिया।

यह समाचार सुनते ही शंबसाधन के क्रोध की ज्वाला भभक उठी। उत्तेजित हो बोला–"ओह; मैंने दया करके देवताओं को प्राणों के साथ छोड़ दिया तो वे मेरी ही हानि करना चाहते हैं? आज तक जो लोग मेरे गुलाम बनकर पड़े रहें, वे आज मेरा वध करने की सोच रहे हैं? अब में इन देवताओं को अपने बाहुबल का परिचय दूंगा।"

इससे वह राक्षस शंबसाधन चुप न रहा, अपने हाथ में चमकनेवाली तलवार लेकर प्रलयकाल के रुद्र की भांति अतिवेग के साथ केसरी के यहाँ आ धमका। राक्षस का गर्जन सुनने पर केसरी के यहाँ रहनेवाले देवताओं के कलेजे कांप उठे। वे लोग अपनी रक्षा के हेतु पहाड़ी गुफाओं तथा केसरी की ओट में छिपने का प्रयत्न करने लगे।

"तुम लोग कहाँ भाग जाओगे? एक ही प्रहार में सबका वध कर बैठूंगा।" यों कहते शंबसाधन देवताओं का पीछा करने लगा। इस पर केसरी ने उसको रोककर कहा–"अरे दुष्ट, तुम मेरे हाथों में मरने के लिए आये हो? मेरे साथ युद्ध करो।"

"छी! छी! एक वानर के साथ युद्ध? मेरे साथ युद्ध करने के लिए स्वयं शिवजी

मारा जिससे राक्षस की तलवार फ़िसल कर दूर जा गिरी।

नीचे गिरी अपनी तलवार को उठाने में शंबसाधन ने अपमान की बात समझी, अतः वह मुष्ठि युद्ध करने को तैयार हो गया। मगर केसरी ने अपनी मुट्ठी से राक्षस की छाती पर प्रहार किया जिससे ख़ून उगलते वह मरकर नीचे गिरा। राक्षस के मरने से देवताओं के कष्ट दूर हो गये।

इसके उपरांत देवताओं ने केसरी से कहा—"तुम और कितने दिन तक ब्रह्मचारी बने रहोगे? अब विवाह करके गृहस्थ बन जाओ।" केसरी भी उस दिन से अपने लिए योग्य कन्या का अन्वेषण करने लगा।

ब्रह्मा ने अहल्या नामक एक अपूर्व सुंदरी की सृष्टि करके गौतम नामक एक मुनि को पत्नी के रूप में दिया। थोड़े समय बाद उन्हें अंजना नामक एक पुत्री पैदा हुई।

भी डरते हैं? पल भर में तुम्हारा अंत कर देता हूँ!" इन शब्दों के साथ शंबसाधन ने तलवार उठाई।

इतने में केसरी ने बड़ी चट्टान उठाकर राक्षस की छाती पर दे मारा। इस पर क्रुद्ध हो राक्षस ने केसरी पर एक गदा फेंक दिया, वह गदा केसरी की छाती से टकरा कर चूर चूर हो गया। लेकिन केसरी ज़रा भी विचलित न हुआ। शंबसाधन ने केसरी पर एक शूल फेंका, केसरी ने उसे पकड़ कर अपने घुटनों पर टिकाकर तोड़ दिया। तब राक्षस केसरी पर तलवार चलाने को बढ़ा, बदले में केसरी ने राक्षस के हाथ पर अपनी पूंछ दे

अंजना अपने पूर्व जन्म में एक विद्याधर की पुत्री थी। वह महान गायिका थी। इसीलिए उसका नाम सुकंठी पड़ा था। वह एक बार अपनी सखियों के साथ हिमालयों में गई। वहाँ पर एक सरोवर में स्नान करके एक वृक्ष के नीचे बैठ गई। उस वक़्त अग्निहोत्र उस रास्ते जाते हुए

दिखाई दिया। उसे देख सुकंठी हंस पड़ी, इस पर अग्नि ने क्रोध में आकर उसे शाप दिया कि वह अगले जन्म में एक वानर का जन्म दे।

इसके कुछ दिन बाद कुंजर नामक एक वानर ने संतान की कामना से शिवजी के प्रति तपस्या की। शिवजी ने कुंजर को दर्शन देकर कहा–"बेटा, तुम्हें पुत्रों के होने के लक्षण दिखाई नहीं देते, मगर तुम्हें एक पुत्री प्राप्त हो जाएगी। उस कन्या के गर्भ से मेरे अंश में एक लोकातीत पुत्र पैदा होकर तुम्हारे वंश का उद्धार करेगा।"

उस दिन से कुंजर इस बात की प्रतीक्षा करने लगा कि उसे पुत्री कब प्राप्त होगी। एक दिन गौतम अंजना को उसके पास लाकर बोला–"तुम इस कन्या को पाल लो।" कुंजर की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही।

अंजना शीघ्र ही अपने माता-पिता को भूल गई और कुंजर को अपने पिता तथा उसकी पत्नी विन्ध्यावली को अपनी माता के रूप में मानने लगी। इस प्रकार एक पुत्री को पाकर वह दंपति प्रसन्न रहने लगा। क्रमशः वह युक्त वयस्का हो गई। कुंजर भी उसके विवाह की बात सोचने लगा।

इस बीच केसरी ने अंजना के सौंदर्य एवं संगीत के बारे में सुना और वह स्वयं उसको देखने चल पड़ा। एक दिन अंजना के वन विहार करते केसरी ने उसे देख लिया। उसकी स्वर्णिम देह-कांति तथा अनुपम सुंदरता पर केसरी को अपार आश्चर्य हुआ। उसे लगा कि यदि वह युवती उसका वरण करे, तो जीवन भर में और किसी भी चीज की उसे आवश्यकता नहीं है।

अंजना के मन में भी केसरी के प्रति मोहभाव पैदा हुआ। किंतु उसने वह बात अपनी सखियों पर प्रकट होने नहीं दी, वन विहार करना समाप्त कर अपने घर लौट गई।

केसरी ने दूसरे दिन अपने निकट मित्रों से बताया कि अंजना उसे पसंद आ गई है, अत: उसके साथ विवाह करने का कोई उपाय करे।

"कुंजर हमारे संबंधी होने योग्य है। उससे बात करके देखेंगे। यदि वह अपनी कन्या देने को तैयार न हो तब बल का प्रयोग करेंगे।" केसरी के रिश्तेदारों ने समझाया।

इसके उपरांत केसरी के द्वारा भेजे गये बुजुर्गों ने कुंजर को केसरी का विचार बताया। केसरी जैसे शक्तिशाली को अपने दामाद बनते देख कुंजर बड़ा प्रसन्न हुआ और नियत मुहूर्त में शास्त्रविधि से कुंजर ने केसरी के साथ अंजना का विवाह किया।

विवाह के बाद दीर्घकाल तक अंजना के कोई संतान न हुई। संतान के वास्ते अंजना और केसरी ने अनेक व्रत किये, पर कोई फ़ायदा न रहा। अंत में अंजना ने संतान के वास्ते वायुदेव के प्रति तपस्या करने का निश्चय किया। केसरी ने भी इसके लिए अपनी सम्मति दी और पुंजक स्थल नामक प्रदेश में अंजना को तप करने की सलाह भी दी। इसी प्रकार अंजना वायुदेव का ध्यान करते तपस्या करने लगी।

आखिर वायुदेव ने कृपा करके चिरकाल से ढोनेवाले शिवजी के तेज को एक फल के रूप में लाकर अंजना के सामने रखा और वह चला गया। अंजना उस फल को खाकर गर्भवती हो गई। अंजना अपने भीतर दिन प्रति दिन गर्भवती के चिह्नों के बढ़ते देख चकित हो गई और व्याकुल भी रहने लगी। अकेली तपस्या करनेवाली नारी गर्भवती कैसे हो सकती है? यह बात प्रकट होने पर लोग क्या सोचेंगे? उसकी समझ में न आया कि क्या किया जाय? इतने में आकाश से एक अद्भुत वाणी सुनाई दी–"बेटी, तुम चिंता मत करो! एक समय शिवजी ने वानर

रूप में रहकर अपने तेज को वायुदेव को प्रदान किया। वायुदेव ने उसे तुमको फल के रूप में दिया है। उस फल को खाने के कारण साक्षात शिवजी तुम्हारे गर्भ में बढ़ रहे हैं। तुम्हारे गर्भधारण में वायु ने तुम्हारी सहायता की, इसलिए तुम्हारा होनेवाला पुत्र वायुपुत्र के रूप में प्रसिद्ध होगा। वह तीनों लोकों में अपार यश प्राप्त करेगा।"

आकाशवाणी की घोषणा के उपरांत वायुदेव अंजना के समक्ष प्रत्यक्ष हो बोला–"आकाशवाणी ने जो कुछ कहा, सत्य है। तुम चिंता न करो। अपने पति के पास जाकर सारा समाचार उसे सुनाओ।" यह कहकर वायुदेव अदृश्य हो गया।

अंजना ने केसरी के यहाँ लौटकर सारा वृत्तांत सुनाया। केसरी प्रसन्न हुआ।

एक वर्ष बाद अंजना ने एक शिशु का जन्म दिया। तत्काल ही देव दुंदुभियाँ बज उठीं। पुष्पों की वर्षा हुई। उस शिशु को देख केसरी अमित आनंदित हुआ। उसने उत्सव मनाया।

अपने पुत्र के वास्ते फल लाने के हेतु अंजना उस शिशु को पर्णशाला में कोंपलों की शय्या पर लिटाकर वन में चली गई। मगर लड़का भूखा था। वह अपनी माता के पीछे पर्णशाला से बाहर आया

और पूर्वी दिशा में देखा। उसी वक्त पूर्वी पहाड़ पर से ऊपर उभरते सूर्य का बिंब दिखाई दिया।

उस बिंब को देख लड़के ने सोचा कि वह कोई फल है। अज्ञान के कारण उसे पकड़ने के लिए वह आसमान में उड़ा। सूर्य की ओर उड़नेवाले उस बालक को देख यक्ष, राक्षस एवं नाग चकित हुए और सोचने लगे कि कोई प्रलय होनेवाला है। वह कोई अपूर्व अवतार जैसा उन्हें दिखाई दिया।

उस बालक को देख अपने अनुचरों के डरते देख सूर्य ने उन्हें समझाया–"यह बालक ईश्वर के तेज को लेकर लोकों की

रक्षा करने के हेतु पैदा हुआ आंजनेय है। महान बल और शौर्यवाला है। मगर बचपन के कारण मुझे देख फल समझकर खाने के लिए आ रहा है। तुम लोग डरो मत।"

अपने निकट आये आंजनेय को देख सूर्य वात्सल्य से भर उठा और उसने अपनी तीक्ष्णता को कम कर दिया। इतने में आंजनेय ने आकर सूर्य को पकड़ कर मुंह में डाल लिया। उसे गरम मालूम हुआ। तब उसको हाथ में ले मारा, पीटा और हो-हल्ला मचाने लगा।

वह अमावास्या का दिन था। राहू के द्वारा सूर्य को निगलनेवाला दिन। इसलिए उस वक़्त सूर्य को निगलने के लिए वहाँ पर राहू आया। राहू को देख आंजनेय ललकार उठा। उस ध्वनि को सुन राहू भयकंपित हो अत्यंत वेग के साथ भाग गया, स्वर्ग में इन्द्र के दरबार में पहुँचा।

इन्द्र की सभा में विद्याधर इन्द्र का स्त्रोत्रपाठ कर रहे थे। तुंबुर तथा नारद वीणावादन कर रहे थे। अप्सराएँ नृत्य कर रही थीं। इन्द्र चिंतामणि पीठ पर वैभव के साथ बैठा हुआ था। राहू इन्द्र के निकट जाकर बोला—"तुम तो मजे के साथ संगीत और नृत्य में अपना समय बिता रहे हो, लगता है कि तुम अपनी बुद्धि भी खो बैठे हो?"

"यह तुम क्या कहते हो?" इन्द्र ने राहू से पूछा।

"आज तो पर्व दिन है। मैं सूर्य को पकड़ने गया, मगर मेरे शत्रु के रूप में एक ने सूर्य को पकड़ रखा है। सूर्य तथा चन्द्रमा को पकड़ने के लिए एक राहू और हो तो मेरी जरूरत ही क्यों?" राहू ने पूछा।

इन्द्र ने विस्मय में आकर कहा—"क्या कहा? एक और व्यक्ति ने आकर सूर्य को पकड़ लिया है? चलो, मेरे साथ!" यों कहकर इन्द्र ऐरावत पर सवार हुआ। हाथ में वज्रायुध ले शीघ्रता से निकल पड़ा।

न देवो विद्यते काष्ठे,
न पाषाणे, न मृण्मये ;
भावेषु विद्यते देवः,
तस्मा द्भावो हि कारणं ॥ ॥ १ ॥

[ईश्वर लकड़ी, पत्थर या मिट्टी में नहीं है। मन में है। इसीलिए सब का मूल कारण मन है।]

मनसैव कृतम् पापम्,
न शरीरकृतम् कृतम् ;
येनै वालिंगिता कांता,
तेनै वालिंगिता सुता ॥ ॥ २ ॥

[मन के द्वारा किया जानेवाला कार्य ही पाप है, शरीर के द्वारा किया जानावाला नहीं, क्योंकि पत्नी के साथ आलिंगन करनेवाला शरीर ही पुत्री का भी आलिंगन करता है।]

दधि मधुरम्, मधु मधुरम्,
द्राक्षा मधुरा, सुधापि मधुरैव ;
तस्य तदेव हि मधुरम्
यस्य मनो यत्र संलग्नम् ॥ ॥ ३ ॥

[दही मीठा है, शहद मीठा है, अमृत मीठा है, जिसका मन जिसमें लगा रहता है, उसके लिए वही मीठा होता है।]

मन

Photo by J. Sarojini

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

ज्योति बन तम दूर करें!

प्रेषक :
मधुकरराव धुर्वे

Photo by P. Sundaram
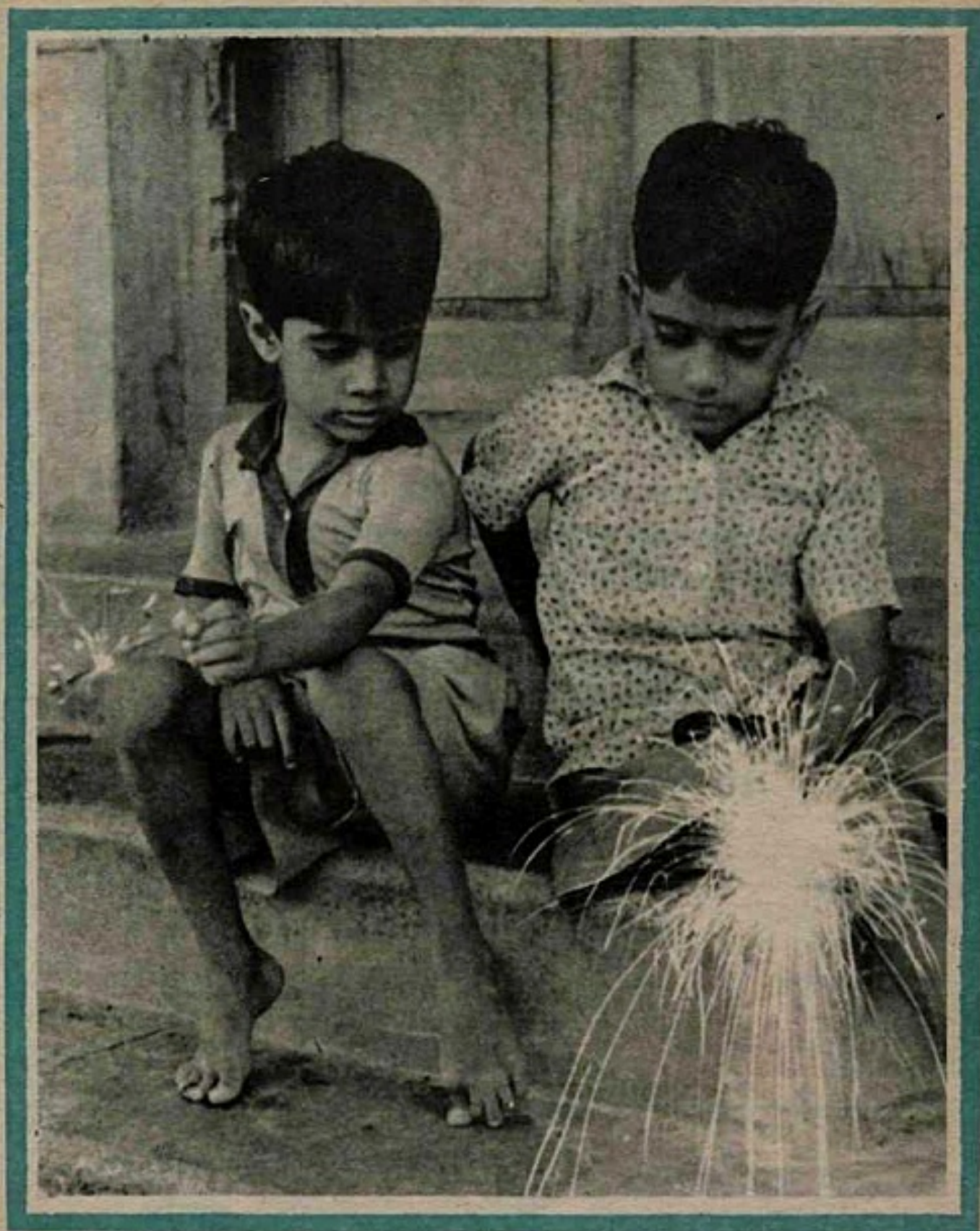
C/o रामकृष्णराव धुर्वे
रायपुर (म. प्र.)

फुल झड़ियों से फूल झरें!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

* परिचयोक्तियाँ नवम्बर १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।
* परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जनवरी के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा आवरण पृष्ठ: **मंदिर**

तीसरा आवरण पृष्ठ: **समाधि**

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3. Arcot Road, Madras-600026. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

हा—हा ! जंगल में मैंने भुतहा मकान देखा है, —उसमें खजाने की एक पेटी है । चलो, चल कर देखें कि उसमें है क्या !

मुझे तो डर लगता है ! कितना अंधेरा है !
घबराओ मत !

आहा ! मिल गई, मिल गई !
देखो ! कैसी अद्‌भुत चीज है !

इसे मुझे दो !
नहीं, इसे मैंने ढूंढा है, यह मेरी है !

परेशान न हो मेरी प्यारी गुड़िया, चार्टर्ड बैंक से मैं तुम्हारे लिये ऐसी ही एक और ला दूंगा ।
SEKAI/2A © WALT DISNEY PRODUCTIONS

Photo by: ANANT DESAI

A MONUMENT

CHANDAMAMA (Hindi) NOVEMBER 1974 Regd. No. M. 5452

मित्र-भेद